वर्ष: 2026 | वॉल्यूम: 02 | अंक: 03 | कुल अंक: 04

शोध बोध

मार्च 2026

बोधकथा शोध संस्थान की मासिक ई-पत्रिका

www.jagoshiv.in

सहकर्मी द्वारा समीक्षित (पियर रिव्यूड)

वर्ष: 2026 | वॉल्यूम: 02 | अंक: 03 | कुल अंक: 04

फरवरी 2026

शोध बोध

बोधकथा शोध संस्थान की मासिक ई-पत्रिका

प्रधान संपादक
शिव नारायण सिंह

संपादक
शिवांश सिंह

संपादन सहयोग
शिवालिका सिंह
शिवेश सिंह
शिवांगी सिंह

अतिथि संपादक
प्रोफेसर धनन्जय सिंह

आवरण एवं संयोजन
धर्मेन्द्र कुमार प्रजापति

प्रकाशक
बोधकथा शोध संस्थान
जागो शिव न्यास का उपक्रम
शिवलोक, गोरखपुर (उ.प्र.)

अनुक्रम

अपनी बात	शिवांश सिंह	03-04
संपादकीय	प्रोफेसर धनन्जय सिंह	05-06
पौराणिक, पारम्परिक और बौद्धिक कथाओं की त्रिवेणी : शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ	अविनाश शुक्ल	07-14
शिवनारायण सिंह की बोधकथाओं में कर्मवाद : भारतीय चिंतन परम्परा के विशेष परिप्रेक्ष्य में	शिखा सिंह	15-24
जीवन–संघर्ष का विजय सोपान : शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ	अजीत कुमार कुशवाहा	25-31
शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ : जीवन की अनुपम अभिव्यक्ति	पल्लवी जालान	32-38
भारतीय कथा-परम्परा की जड़ों को मजबूत करतीं शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ	अरुणा कुमारी	39-44
ग्रामीण जीवन का वैभव और शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ	सपना सिंह	45-54
समकालीन समाज की विडंबनाएँ और शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ : एक पुनर्व्याख्यात्मक अध्ययन	श्रद्धा त्रिपाठी	54-62

वर्ष: 2026 | वॉल्यूम: 02 | अंक: 03 | कुल अंक: 04

अपनी बात

शिवांश सिंह

मानवीय मूल्यों की स्थापना, वैचारिक शुद्धता और संस्कारित समाज के निर्माण का मार्ग कभी सरल नहीं रहा। यह एक सतत साधना है, जिसमें समर्पण, धैर्य और दूरदृष्टि की आवश्यकता होती है। किन्तु जब कोई व्यक्तित्व इस कठिन पथ पर निरन्तर अग्रसर रहते हुए स्वयं एक संस्था का स्वरूप ग्रहण कर ले, तब वह केवल व्यक्ति नहीं रहता—वह विचार, प्रेरणा और सामाजिक चेतना का केन्द्र बन जाता है। शिव नारायण सिंह जी ऐसे ही व्यक्तित्व हैं, जिन्होंने शिक्षा, साहित्य, संस्कृति और सामाजिक जागरण के क्षेत्र में अपने दीर्घकालिक योगदान से एक जीवंत प्रेरणा-स्तंभ का रूप धारण किया है।

उनका व्यक्तित्व उस विशाल वटवृक्ष के समान है, जिसकी छाया में ज्ञान का विकास होता है, संस्कारों का पोषण होता है और जीवन को दिशा मिलती है। वे मानते हैं कि मनुष्य का वास्तविक मूल्यांकन उसकी उपाधियों, पदों या बाहरी उपलब्धियों से नहीं, बल्कि उसकी संवेदनशीलता, करुणा, नैतिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व से होना चाहिए। उनके चिन्तन का केन्द्र सदैव यही रहा है कि शिक्षा का उद्देश्य केवल आजीविका अर्जित करना नहीं बल्कि ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण करना है जो समाज, संस्कृति और राष्ट्र के प्रति अपनी भूमिका को समझ सके।

उनकी दृष्टि में यदि शिक्षा व्यक्ति को मानवीय मूल्यों, सामाजिक सरोकारों और सांस्कृतिक चेतना से नहीं जोड़ती, तो वह अधूरी है। वे बार-बार इस बात पर बल देते हैं कि विद्यार्थियों के भीतर अपने देश, अपनी संस्कृति, अपनी परम्पराओं और अपने नैतिक आदर्शों के प्रति सम्मान का भाव जागृत होना चाहिए। केवल बौद्धिक दक्षता पर्याप्त नहीं; उसके साथ संवेदनशीलता और चरित्र का संतुलन भी अनिवार्य है।

आज का समय तीव्र सूचना-प्रवाह, तकनीकी विस्तार और वैश्विक प्रतिस्पर्धा का युग है। ज्ञान के साधन बढ़े हैं, परन्तु इसके साथ-साथ मूल्यबोध, मौलिकता और नैतिक सन्तुलन के संकट भी गहराए हैं। ऐसे समय में शिव नारायण सिंह जी का चिन्तन हमें अपनी जड़ों की ओर लौटने का सन्देश देता है। वे भारतीय ज्ञानपरम्परा, साहित्य और बोधकथाओं को केवल अतीत की धरोहर नहीं मानते, बल्कि वर्तमान और भविष्य के नैतिक पुनर्निर्माण का सशक्त साधन मानते हैं।

'बोधकथा शोध संस्थान' तथा 'शोध–बोध' पत्रिका इसी उद्देश्य की सार्थक अभिव्यक्ति हैं। इन माध्यमों से वे निरन्तर यह सन्देश देते रहे हैं कि शोध केवल अकादमिक उपलब्धि नहीं, बल्कि समाजोपयोगी चेतना का विस्तार होना चाहिए। ज्ञान तभी सार्थक है जब वह लोककल्याण से जुड़ सके। उनका मानना है कि विद्यालय केवल पाठ्यक्रम पूर्ण करने का स्थान नहीं, बल्कि संवेदना, अनुशासन और जीवन-दृष्टि विकसित करने का केन्द्र होना चाहिए। वे शिक्षकों को केवल अध्यापक नहीं, बल्कि संस्कार-निर्माता मानते हैं। इस दृष्टि से उनका साहित्य शिक्षण-जगत के लिए विशेष महत्त्व रखता है।

शिव नारायण सिंह जी की बोधकथाएँ केवल मनोरंजन या साहित्यिक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि जीवनबोध, विवेकबोध, नीतिबोध और संवेदनात्मक जागरण का माध्यम हैं। उनकी 'विद्यार्थियों से...' ग्रंथमाला बाल एवं युवा पीढ़ी के व्यक्तित्व निर्माण की दिशा में एक अभिनव और अनुकरणीय प्रयास है।

सरल, सहज और किस्सागोई शैली में बोली गई ये कथाएँ विद्यार्थियों को जीवन के गूढ़ सत्यों से परिचित कराती हैं। इन कथाओं के माध्यम से वे यह स्थापित करते हैं कि साहित्य का वास्तविक उद्देश्य केवल ज्ञानार्जन नहीं, बल्कि चरित्र निर्माण है। विशेष रूप से बाल्य और किशोरावस्था में यदि साहित्य के

माध्यम से नैतिक मूल्यों का संस्कार प्रदान किया जाए, तो समाज की भावी संरचना अधिक सुदृढ़ हो सकती है। यही कारण है कि उनकी रचनाएँ शिक्षकों, विद्यार्थियों और अभिभावकों सभी के लिए प्रेरक सिद्ध होती हैं।

अनुशासन के विषय में भी उनका दृष्टिकोण अत्यंत स्पष्ट और व्यावहारिक है। वे अनुशासन को बाहरी दबाव नहीं, बल्कि आत्म-विकास की अनिवार्य प्रक्रिया मानते हैं। उनके अनुसार, जब व्यक्ति अपने उद्देश्य, कर्त्तव्य और आदर्शों के प्रति समर्पित होता है, तब अनुशासन उसके व्यक्तित्व का स्वाभाविक अंग बन जाता है। आज जब समाज में त्वरित सफलता की प्रवृत्ति बढ़ रही है, वे साधना, धैर्य और निरन्तर परिश्रम को सफलता का वास्तविक आधार मानते हैं। उनका जीवन स्वयं इस सत्य का प्रमाण है कि स्थायी उपलब्धियाँ केवल समर्पण और मूल्यनिष्ठा से प्राप्त होती हैं।

भारतीय शिक्षा परम्परा में गुरु को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने वाला मार्गदर्शक माना गया है। शिव नारायण सिंह जी इसी परम्परा के जीवंत प्रतिनिधि प्रतीत होते हैं। वे शिक्षा को सूचना नहीं, बल्कि चेतना का जागरण मानते हैं। उनका समूचा कार्य इसी भाव पर आधारित है कि व्यक्ति के भीतर छिपी संभावनाओं को सही दिशा, संस्कार और प्रेरणा के माध्यम से विकसित किया जा सकता है।

'शोध–बोध' पत्रिका का मूल उद्देश्य भी इसी विचारधारा को आगे बढ़ाना है। यह केवल शोध-पत्रों का मंच नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति, साहित्य, दर्शन और समाजोपयोगी चिन्तन को नई पीढ़ी तक पहुँचाने का माध्यम है। यहाँ शोध का अर्थ केवल शैक्षणिक औपचारिकता नहीं, बल्कि समाज, संस्कृति और मानवीय मूल्यों की पुनर्प्रतिष्ठा है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम आधुनिकता और परम्परा के बीच सन्तुलन स्थापित करें। पश्चिम की वैज्ञानिक प्रगति का स्वागत करते हुए भी हमें अपनी सांस्कृतिक आत्मा को सुरक्षित रखना होगा। शिव नारायण सिंह जी का चिन्तन इसी समन्वय का समर्थक है। वे भारतीय आध्यात्मिकता, सांस्कृतिक मूल्यों और आधुनिक शोध-दृष्टि के समन्वय को भविष्य का मार्ग मानते हैं।

उनका जीवन और कार्य हमें यह सिखाता है कि नेतृत्व का अर्थ केवल अधिकार नहीं, बल्कि सेवा है शिक्षा का अर्थ केवल रोजगार नहीं, बल्कि व्यक्तित्व निर्माण है और साहित्य का अर्थ केवल अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि समाज को दिशा देना है। निस्संदेह, उनका चिन्तन और सृजन हमें यह बोध कराता है कि सच्ची शिक्षा वही है जो मनुष्य को बेहतर मनुष्य बनाए, और सच्चा शोध वही है जो समाज को नई दिशा प्रदान करे। यही शोध का बोध है, यही साहित्य का उद्देश्य है, और यही हमारे सांस्कृतिक भविष्य की सबसे बड़ी आवश्यकता भी।

आज की पीढ़ी को साधना और सिद्धि के बीच के अंतर को समझना होगा। बिना साधना के प्राप्त हुई सिद्धि टिकती नहीं है। बोधकथा शोध संस्थान का मूल मंत्र यही है यहाँ शोधार्थियों के भीतर उस धैर्य का विकास किया जाता हैं, जो उन्हें प्रतिकूल परिस्थितियों में भी अडिग रहने की शक्ति देता है। शिव नारायण सिंह जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से यह उद्भाषित है कि सफलता कोई मंजिल नहीं, बल्कि एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। वहीं उन्होंने शिक्षा जगत को जो नया स्वरूप दिया है, वह केवल बौद्धिक विकास का नहीं, बल्कि आध्यात्मिक और सामाजिक रूपान्तरण का मार्ग है।

इस स्तंभ के माध्यम से हम शिव नारायण सिंह जी के इसी प्रेरणास्पद जीवन-दर्शन को आत्मसात् करते हैं। उनका कार्य शिक्षा, साहित्य और समाज के क्षेत्र में उन मूल्यों की पुनर्स्थापना का महत्त्वपूर्ण प्रयास है, जिन पर एक स्वस्थ, संवेदनशील और सशक्त राष्ट्र की आधारशिला निर्मित होती है।

16.03.2026 शिवलोक, गोरखपुर (उ.प्र.)

संपादकीय

प्रोफेसर धनन्जय सिंह
अध्यक्ष– मनोविज्ञान विभाग
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय,
गोरखपुर, (उ. प्र.)

मानव सभ्यता के विकासक्रम में कथा केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं रही, बल्कि वह ज्ञान, मूल्य, अनुभव और चेतना के संवहन का सबसे प्रभावशाली साधन रही है। विशेषतः बोधकथाएँ- जो पारम्परिक नैतिक, शिक्षाप्रद और जीवनोपयोगी कथाओं के रूप में विश्व की विविध संस्कृतियों में विद्यमान रही हैं-मानव व्यक्तित्व के निर्माण में अद्वितीय भूमिका निभाती आई हैं। भारतीय ज्ञान परम्परा में पंचतंत्र, जातक कथाएँ, हितोपदेश तथा लोककथाओं की समृद्ध परम्परा ने न केवल समाज को नैतिक दिशा प्रदान की, बल्कि व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक विकास को भी गहराई से प्रभावित किया है। बोधकथाएँ केवल कोरे शब्द नहीं, बल्कि सूक्ष्म बीज हैं, जो मानव-मस्तिष्क की उर्वर भूमि पर गिरते ही वटवृक्ष का रूप ले लेती हैं।

'शोध-बोध' पत्रिका के पूर्ववर्ती अंकों में जहाँ साहित्य, भाषा, संस्कृति और भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध आयामों को गंभीर विमर्श का विषय बनाया गया है। वहीं यह अंक बोधकथा साहित्य की उस विशिष्ट परम्परा पर केंद्रित है, जो केवल कथा-साहित्य का एक रूप नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना, नैतिक निर्माण और मनोवैज्ञानिक परिष्कार की एक सशक्त विधा है। यह अंक विशेष रूप से आदरणीय शिव नारायण सिंह जी की बोधकथाओं के बहुआयामी अध्ययन को समर्पित है, जिनकी रचनाएँ भारतीय जीवन-दर्शन, लोकानुभव, नैतिकता और समकालीन सामाजिक यथार्थ का अद्भुत समन्वय प्रस्तुत करती हैं।

'बोध' शब्द अपने भीतर केवल ज्ञान या सूचना का अर्थ नहीं समेटे हुए है; यह चेतना, आत्मानुभूति, विवेक और जीवन की सार्थक समझ का बोधक है। स्व-बोध, विषय- बोध और साक्षी- बोध की पारम्परिक अवधारणाओं के साथ जब हम 'शोध-बोध' को जोड़ते हैं, तब यह केवल कथाओं पर शोध करने तक सीमित नहीं रहता, बल्कि कथा के माध्यम से समाज, संस्कृति और मानवीय चेतना को समझने की द्वि-दिशात्मक प्रक्रिया बन जाता है। यही दृष्टि इस अंक की वैचारिक आधारभूमि है। यहाँ शोध करना केवल तथ्यों का अन्वेषण नहीं है, बल्कि यह तो उस बोध तक पहुँचाने का मार्ग है जहाँ पहुँचकर मनुष्य 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' के पथ पर चल पड़ता है।

मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य से देखें तो बोध कथाएँ व्यक्ति के संज्ञानात्मक विकास, नैतिक तर्कशक्ति और भावनात्मक परिपक्वता में अत्यन्त प्रभावी भूमिका निभाती हैं। 'जीन पियाजे' के संज्ञानात्मक विकास सिद्धान्त के अनुसार बालमस्तिष्क प्रतीकों, रूपकों और सरल कथात्मक संरचनाओं के माध्यम से जटिल नैतिक अवधारणाओं को सहज रूप में ग्रहण करता है। बोधकथाओं में प्रयुक्त पशु-पक्षी, लोकपात्र और प्रतीकात्मक घटनाएँ बच्चों तथा वयस्कों दोनों के लिए मानसिक संरचनाओं (स्कीमा) का निर्माण करती हैं, जिसके माध्यम से वे जीवन के अनुभवों को व्यवस्थित और अर्थपूर्ण बनाते हैं।

'लॉरेंस कोहलबर्ग' के नैतिक विकास सिद्धान्त की दृष्टि से भी बोध कथाएँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। इनमें निहित नैतिक द्वंद्व-सत्य और असत्य, लोभ और त्याग, स्वार्थ और परोपकार, व्यक्ति को नैतिक निर्णय क्षमता के क्रमिक विकास की ओर प्रेरित करते हैं। कोहलबर्ग के सिद्धान्त में वर्णित नैतिक तर्कशीलता को ये बोधकथाएँ एक व्यावहारिक धरातल प्रदान करती हैं। 'अल्बर्ट बंडूरा' के सामाजिक अधिगम सिद्धान्त के अनुरूप, बोध कथाओं के पात्र आदर्श या प्रतिकूल व्यवहार के मॉडल प्रस्तुत करते हैं, जिनके परिणामों के माध्यम से पाठक या श्रोता परोक्ष पुनर्बलन द्वारा जीवनोपयोगी शिक्षाएँ ग्रहण करता है। इस प्रकार बोधकथाएँ केवल शिक्षण सामग्री नहीं, बल्कि

व्यवहार-निर्माण की जीवन्त प्रयोगशाला सिद्ध होती हैं।

भावनात्मक और सामाजिक विकास के स्तर पर भी इन कथाओं की उपयोगिता असंदिग्ध है। ईर्ष्या, करुणा, भय, साहस, लोभ, दया, न्याय और संवेदना जैसे भावों का कथा-संरचना में समावेश व्यक्ति को आत्मविश्लेषण और भावनात्मक सन्तुलन की दिशा में प्रेरित करता है। आधुनिक 'नैरेटिव थेरेपी' की दृष्टि से भी कथा व्यक्ति को अपने अनुभवों की पुनर्व्याख्या करने और जीवन के संघर्षों को अर्थपूर्ण रूप में देखने की शक्ति प्रदान करती हैं। वहीं, इन बोधकथाओं में श्रोता एवं पाठक अपना प्रतिबिम्ब देखता है, और जब वह उस पात्र को संघर्ष करते देखता है तो उसके अन्दर का आत्मविश्वास जाग उठता है, और वह कह उठता है— 'चरैवेति, चरैवेति, चरैवेति'। इस प्रकार बोधकथाएँ परम्परा और आधुनिक मनोविज्ञान के मध्य सेतु का कार्य करती हैं।

भारतीय सांस्कृतिक सन्दर्भ में बोधकथाएँ सामाजिक मूल्यों के अंतःसंचरण की प्रभावशाली विधा रही हैं। धर्म, कर्त्तव्य, सामाजिक सौहार्द, पारिवारिक उत्तरदायित्व, प्रकृति- सम्मान और मानवीय सहअस्तित्व जैसे मूल्य पीढ़ी-दर-पीढ़ी इन कथाओं के माध्यम से सम्प्रेषित होते रहे हैं। शिव नारायण सिंह जी की बोधकथाएँ इसी परम्परा को समकालीन सन्दर्भों में पुनर्स्थापित करती हैं। उनकी कथाओं में ग्रामीण जीवन की सहजता, लोकसंस्कारों की गहराई, सामाजिक विडंबनाओं की पहचान, कर्मवाद की भारतीय अवधारणा तथा मानवीय संघर्ष की प्रेरक व्याख्या देखने को मिलती है। कुल मिलाकर कह सकते हैं कि शिव नारायण सिंह एक किस्सागो ही नहीं, बल्कि वे एक समाजशास्त्री, मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक और उससे आगे एक प्रबल शिक्षाविद् के रूप में उभरकर सामने आते हैं।

इस मार्च अंक में संकलित शोध आलेख इस बहुआयामी साहित्यिक धारा का विविध दृष्टियों से विश्लेषण प्रस्तुत करते हैं। अविनाश शुक्ल ने शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में पौराणिक, पारम्परिक और बौद्धिक तत्वों की त्रिवेणी का विवेचन किया है। शिखा सिंह ने कर्मवाद के आलोक में भारतीय चिंतन परम्परा से इन कथाओं के सम्बन्धों को रेखांकित किया है। अजीत कुमार कुशवाहा ने जीवन-संघर्ष और प्रेरणा के आयामों का विश्लेषण किया है, जबकि पल्लवी जालान ने इन्हें जीवन की अनुपम अभिव्यक्ति के रूप में देखा है। अरूणा कुमारी ने भारतीय कथा परम्परा की जड़ों को सुदृढ़ करने में इन कथाओं की भूमिका स्पष्ट की है। सपना सिंह ने ग्रामीण जीवन के सांस्कृतिक वैभव को उद्घाटित किया है तथा श्रद्धा त्रिपाठी ने समकालीन सामाजिक विडंबनाओं की पुनर्व्याख्या के माध्यम से इनके आधुनिक महत्त्व को रेखांकित किया है।

यह अंक इस तथ्य को स्थापित करता है कि बोध कथा साहित्य अतीत का अवशेष नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के नैतिक-सांस्कृतिक निर्माण का सक्रिय साधन है। आज जब शिक्षा, समाज और परिवार मूल्य- संकट, सांस्कृतिक विच्छेदन और मनोवैज्ञानिक असन्तुलन जैसी चुनौतियों से जूझ रहे हैं, तब बोधकथाएँ पुनः प्रासंगिक होकर हमारे सामने उपस्थित होती हैं। वे शिक्षा में नैतिकता, परामर्श में प्रतीकात्मक चिकित्सा, पालन-पोषण में मार्गदर्शन तथा सामाजिक चेतना में मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना का सशक्त माध्यम बन सकती हैं।

'बोधकथा शोध संस्थान' का यह प्रयास केवल साहित्यिक अध्ययन तक सीमित नहीं, बल्कि भारतीय ज्ञान परम्परा के उन जीवन्त स्रोतों को पुनर्परिभाषित करने का है, जो समाज को विचार, मूल्य और दिशा प्रदान करते हैं तथा हमारे भीतर के सोए हुए सत्य को जगाने का प्रयास करते हैं, तथा संघर्षों के बीच न्याय और करुणा का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

हमें विश्वास है कि यह अंक पाठकों, शोधार्थियों और अध्येताओं को बोध कथा साहित्य की मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक और वैचारिक प्रासंगिकता पर नए विमर्श के लिए प्रेरित करेगा। अंततः, बोध कथाएँ हमें यह स्मरण कराती हैं कि कथा केवल कही नहीं जाती- वह समाज को गढ़ती है, चेतना को परिष्कृत करती है और मनुष्य को मनुष्य बनाती है। यही बोध, यही शोध, और यही सांस्कृतिक उत्तरदायित्व इस मार्च अंक की मूल प्रेरणा है।

वर्ष: 2026 | वॉल्यूम: 02 | अंक: 03 | कुल अंक: 04

पौराणिक, पारम्परिक और बौद्धिक कथाओं की त्रिवेणी : शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ

अविनाश शुक्ल
शोधार्थी
बोधकथा शोध संस्थान
शिवलोक, गोरखपुर उ. प्र.
शोध छात्र - हिन्दी विभाग, सिद्धार्थ विश्वविद्यालय, कपिलवस्तु, सिद्धार्थनगर
शोध केन्द्र- जवाहरलाल नेहरू स्मारक पोस्ट ग्रेजुएट कालेज, महाराजगंज, उ. प्र.

सारांश

यह शोध-पत्र शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में निहित पौराणिक, पारम्परिक एवं बौद्धिक तत्वों के समन्वित स्वरूप का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। भारतीय साहित्यिक परम्परा में कथा-साहित्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं रहा, बल्कि वह जीवन-दर्शन, नैतिक मूल्यों और सामाजिक चेतना का संवाहक रहा है। शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए पौराणिक आख्यानों, लोक-परम्पराओं और आधुनिक बौद्धिक दृष्टि का एक अद्वितीय संगम प्रस्तुत करती हैं।

इन कथाओं में पौराणिक सन्दर्भों के माध्यम से आदर्शों और मूल्यों की स्थापना की गई है, वहीं पारम्परिक तत्वों के द्वारा लोकजीवन, संस्कृति और सामाजिक व्यवहार को अभिव्यक्ति मिली है। साथ ही, बौद्धिक दृष्टिकोण के माध्यम से तर्क, विवेक और आत्मविश्लेषण की भावना को विकसित किया गया है। इस प्रकार, उनकी बोधकथाएँ केवल शिक्षाप्रद ही नहीं, बल्कि बहुआयामी चिंतन को प्रेरित करने वाली भी हैं।

यह अध्ययन इस बात को स्थापित करता है कि शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ पौराणिकता, परम्परा और बौद्धिकता की त्रिवेणी के रूप में भारतीय जीवन-दृष्टि को समग्रता में प्रस्तुत करती हैं। उनकी कथाएँ व्यक्ति के नैतिक, सामाजिक और बौद्धिक विकास के लिए एक सशक्त माध्यम के रूप में कार्य करती हैं।

बीज-शब्द – बोधकथा, पौराणिकता, परम्परा, बौद्धिकता, लोकजीवन, नैतिकता, भारतीय चिंतन, कथा-साहित्य

शोध आलेख – भारतीय साहित्यिक परम्परा में कथा-साहित्य का विशेष महत्त्व रहा है। यहाँ कथा केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि जीवन के गूढ़ सत्यों को सरल, सहज और प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करने का सशक्त साधन रही हैं। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक समय तक कथाओं के माध्यम से समाज को नैतिक दिशा, सांस्कृतिक पहचान और बौद्धिक चेतना प्रदान की जाती रही है। इसी परम्परा के अंतर्गत शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं, जो पौराणिक, पारम्परिक और बौद्धिक तत्वों का अद्भुत समन्वय प्रस्तुत करती हैं।

शिव नारायण सिंह केवल एक शिक्षक या साहित्यकार ही नहीं, बल्कि एक ऐसे विचारक हैं, जिन्होंने कथा को जीवन-निर्माण का माध्यम बनाया। उनकी बोधकथाएँ विद्यार्थियों और समाज को केवल ज्ञान ही नहीं देतीं, बल्कि उन्हें सोचने, समझने और सही निर्णय लेने की प्रेरणा भी प्रदान करती हैं। उनकी कथाओं की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे बहुआयामी हैं उनमें पौराणिक आदर्शों की गहराई, परम्परा की जड़ें और आधुनिक बौद्धिकता की चेतना तीनों का समन्वय दिखाई देता है।

पौराणिक तत्वों के माध्यम से उनकी कथाएँ भारतीय संस्कृति के मूल आदर्शों धर्म, कर्त्तव्य, सत्य और नैतिकता को प्रस्तुत करती हैं। वे पौराणिक प्रसंगों और पात्रों का उपयोग करके जीवन के आदर्शों को सरल भाषा में समझाते हैं, जिससे स्रोता एवं पाठक उन मूल्यों को सहज रूप से आत्मसात कर सकें।

इसके साथ ही, उनकी कथाओं में पारम्परिक तत्वों की भी स्पष्ट झलक मिलती है। लोकजीवन, ग्रामीण परिवेश, सामाजिक व्यवहार, पारिवारिक सम्बन्ध और सांस्कृतिक मान्यताएँ उनकी कथाओं के अभिन्न अंग हैं। ये तत्व उनकी कथाओं को जमीनी स्तर से जोड़ते हैं और उन्हें अधिक प्रभावशाली एवं जीवन-सापेक्ष बनाते हैं। यहाँ

कहानीकार इस सन्दर्भ में लगभग चित्रकार जैसा हो जाता है, कहानियों में लोक-जीवन के चित्रण को भारत यायावर इन शब्दों में स्पष्ट करते हैं- "मैं किसी भी आदमी, पेड़-पौधा, चिड़िया, जानवर या वस्तु की कल्पना उसके रंग के बगैर नहीं कर सकता। फिर हर चीज़ की एक गन्ध होती है। तो जब मैं लिख रहा होता हूँ तो रंगों और गन्धों के बारे में बताना भी ज़रूरी समझता हूँ। फिर उन रंगों और गन्धों का हमारी इन्द्रियों पर भी प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। वे प्रभाव किस प्रकार के हैं, इसे भी बताना होता है। ध्वनियों का चित्रण एक खास तरह की गीतात्मकता ही नहीं, कथा को गतिमयता में भी बदलता है। जिस तरह हर शब्द की ध्वन्यात्मकता होती है, प्रकृति की हर इकाई, जिसमें सक्रियता या गतिशीलता है, उसकी ध्वनि भी है और हर समय यह ध्वनि एक जैसी नहीं होती है। उसमें बदलाव होता रहता है, मैं जब लिखने बैठता हूँ तो पूरे परिवेश पर मेरा ध्यान होता है। एक असली कथाकार में चित्रकार और संगीतकार की आत्मा भी बैठी होती है।"1 शिव नारायण जी के रचना कौशल पर यह कथन बिल्कुल सटीक बैठता है।

बौद्धिक तत्व उनकी कथाओं का तीसरा और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आयाम है। वे केवल आदर्श प्रस्तुत नहीं करते, बल्कि स्रोता एवं पाठक को सोचने, तर्क करने और आत्मविश्लेषण करने के लिए प्रेरित करते हैं। उनकी कथाएँ प्रश्न उठाती हैं, विचारों को चुनौती देती हैं और व्यक्ति को अपने कर्मों एवं निर्णयों के प्रति सजग बनाती हैं। इस प्रकार, वे केवल भावनात्मक ही नहीं, बल्कि बौद्धिक विकास का भी माध्यम बनती हैं।

आधुनिक युग में, जहाँ भौतिकता, प्रतिस्पर्धा और मूल्य संकट बढ़ता जा रहा है, वहाँ ऐसी कथाओं की आवश्यकता और अधिक बढ़ जाती है, जो व्यक्ति को सन्तुलित जीवन-दृष्टि प्रदान कर सकें। शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ इस आवश्यकता को पूर्ण करती हैं। वे परम्परा और आधुनिकता के बीच एक सेतु का कार्य करती हैं और व्यक्ति को एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करती हैं।

वे अपने विद्यार्थियों से कहते हैं, 'जरा गौर कीजिए, हमेशा आपको दिखाई देता है, यह अभाव है, वह अभाव है, यह नहीं है, वह नहीं है, कुछ भी नहीं है आपके पास। लेकिन ऐसा नहीं है, आपके पास जो कुछ है, जो भी है एक बार सोचकर तो देखिए, क्या आप उसका पूर्णरूप से उपयोग कर रहे हैं? कत्तई नहीं कर रहे हैं, कोई नहीं कर पाता है, लेकिन आपको करना है। जो कर लेता है वही कुछ कर पाता है। आपको ईश्वर ने जितना दिया है, वही इतना अमूल्य है कि उसकी कीमत नहीं आँकी जा सकती। फिर भी आप उसके फेर मे रहते हैं जिसका कोई अर्थ नहीं है।" 2

शिव नारायण सिंह का यह विचार दर्शाता है कि मनुष्य प्रायः अपने जीवन में उपलब्ध संसाधनों और क्षमताओं के बजाय उनके अभाव पर अधिक ध्यान केंद्रित करता है, जिसके कारण उसमें असंतोष और हीनता की भावना उत्पन्न होती है। वास्तव में प्रत्येक व्यक्ति को ईश्वर द्वारा प्रदत्त गुण, समय, अवसर एवं संभावनाएँ अत्यन्त मूल्यवान होती हैं, किन्तु उनका समुचित एवं पूर्ण उपयोग विरले ही लोग कर पाते हैं। यह कथन इस तथ्य को रेखांकित करता है कि सफलता का मूल आधार संसाधनों की अधिकता नहीं, बल्कि उपलब्ध साधनों का प्रभावी उपयोग है। अतः मनुष्य को चाहिए कि वह अपने भीतर निहित सामर्थ्य को पहचाने, उसे विकसित करे तथा निरर्थक अभाव-बोध से मुक्त होकर अपने वर्तमान साधनों का अधिकतम सदुपयोग करे, क्योंकि यही दृष्टिकोण उसे वास्तविक प्रगति और संतोष की ओर अग्रसर करता है। भौतिकता एवं पूँजी के बढ़ते प्रभाव के कारण जीवन को भी भौतिक धरातल पर आँका जाने लगा है। मनुष्य अधिक से अधिक संसाधन जुटाने के प्रयास में अपने जीवन मूल्य को निरन्तर ताक पर रखता जा रहा है। यहाँ समाज को शिव नारायण सिंह जैसे साहित्यकारों की आवश्यकता आन पड़ती है, मूल्य-विघटन की ऐसी परिस्थिति में साहित्यकार ही अपने साहित्य के माध्यम से मनुष्य को प्रेरित कर सकता है। डॉ. नत्थूलाल गुप्त 'नवल'के कथनानुसार, "जीवन-मूल्यों के ह्रास एवं विघटन से संत्रस्त इस वर्तमान युग में रचनाकार का यह दायित्व होना चाहिए कि वह पाठकों में जीवन-मूल्यों के प्रति एक सात्विक आस्था जगावे ताकि पाठक अनास्था के कुहासे से निकलकर नवीन प्रकाश में अपनी जीवन-शैली का स्वयं निर्माण कर सके।"3

अंततः, यह कहा जा सकता है कि शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ पौराणिकता, परम्परा और बौद्धिकता की त्रिवेणी के रूप में भारतीय जीवन-दर्शन को एक नई दिशा प्रदान करती हैं। उनकी कथाएँ न केवल शिक्षाप्रद हैं, बल्कि व्यक्ति के नैतिक, सामाजिक और बौद्धिक विकास के लिए

एक सशक्त आधार भी प्रस्तुत करती हैं।

पौराणिक तत्व: आदर्श और नैतिकता –

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में पौराणिक तत्वों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और केंद्रीय स्थान है। वे पौराणिक कथाओं, प्रतीकों, रूपकों और प्रसंगों का अत्यन्त सूक्ष्म एवं प्रभावशाली ढंग से उपयोग करते हुए जीवन के उच्च आदर्शों की स्थापना करते हैं। भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में पौराणिक कथाएँ केवल धार्मिक आख्यान नहीं हैं, बल्कि वे मानव जीवन के नैतिक, आध्यात्मिक और दार्शनिक मूल्यों की वाहक रही हैं। धर्म, सत्य, कर्त्तव्य, त्याग, संयम, धैर्य और न्याय जैसे मूल्यों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी संप्रेषित करने में इन कथाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है, और यही परम्परा शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में भी सजीव रूप में दिखाई देती है।

'कर्म में अकर्म' नामक शीर्षक के अंतर्गत पण्डित जी के हाथों अनायास गाय के मृत्यु हो जाने के उपरान्त ग्लानि से भरे पंडित जी स्वयं का दोष अपने हाथों के देवता इन्द्र को देते हुए कहते हैं- ''हाँ, इन्ही हाथों से मैंने गौ हत्या की है। पर ये हाथ तो मेरे नहीं हैं, इस पर तो इन्द्र का शासन चलता है। यह काम मेरा किया हुआ नहीं है, इन्द्र ने ऐसा करवाया है, इसलिए ऐसा हो गया। इन्द्र जो ब्राह्मण के वेश में थे, उन्होंने कहा- जब इन फूलों को आपने लगाया तब तो ये हाथ आपके थे और जब गौ हत्या हुई, तब ये हाथ इन्द्र के हो गये।

'प्रिय विद्यार्थियों, हमारा, आपका ठीक ऐसा ही स्वभाव है। ब्राह्मण की बात हो रही थी, वह कितनी सही है आप तो समझ ही सकते हैं, लेकिन यह बात पूरी तरह सही है कि आप लोग भी ब्राह्मण की जगह होते तो ऐसा ही कहते। हम होते तो हम भी यही कहते। फूल लगाया, बड़े सुन्दर हैं, बड़े अच्छे हैं, हमने लगाया, अब गौ हत्या हो गई, तो इन्द्र जाने। इन्द्र प्रकट हुए और ब्राह्मण को बात समझ में आ भी गई'।"4

''यही आपका स्वभाव है। जब भी आप कोई कार्य करते हैं और परिणाम बेहतर होता है, अच्छा होता है, तब आप उसका श्रेय स्वयं लेना चाहते हैं। जब बातें बदल जाती हैं, परिणाम पक्ष में नहीं होता है, तब आप कन्नी काटना शुरू कर देते हैं। फिर वहाँ ऐसा नहीं सोचते कि जिसने इस कार्य को करने की प्रेरणा दी है हमें, वह भी कुछ है, उसका भी महत्त्व है, उसका भी इम्पार्टेन्स है और यही कारण है रिजल्ट से आसक्ति होने का। रिजल्ट आता है और अगर वह आपके पक्ष में है, तो आसक्ति हो जाती है। उसे आप अपने से जोड़ लेते हैं, उसका श्रेय आप स्वयं लेना चाहते हैं।"5

इस प्रकार से शिव नारायण सिंह अपने विद्यार्थियों से इतनी गूढ़ बात को कथा के माध्यम से सहज रूप में ग्रहण करा देते है । यह कथा मानव-स्वभाव की उस द्वंद्वात्मक प्रवृत्ति को उद्घाटित करती है, जिसमें व्यक्ति अनुकूल परिणामों का श्रेय स्वयं ग्रहण करता है, किन्तु प्रतिकूल परिस्थितियों में उत्तरदायित्व से विमुख होकर बाह्य शक्तियों को दोषारोपित करता है। पण्डित जी और इन्द्र के संवाद के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि कर्त्तव्यबोध का यह चयनात्मक दृष्टिकोण अहंकार और आसक्ति का द्योतक है। शिव नारायण सिंह अपने विद्यार्थियों को यह शिक्षा देना चाहते हैं कि वास्तविक नैतिकता और आत्मविकास का आधार अपने प्रत्येक कर्म के प्रति उत्तरदायित्व स्वीकार करना तथा परिणामों से अनासक्त रहकर निष्पक्ष भाव से कर्म करना है।

उनकी कथाओं में पौराणिक तत्व केवल कथानक को रोचक बनाने के लिए प्रयुक्त नहीं है , बल्कि वे गहन जीवन-दर्शन और नैतिक संदेशों के संवाहक के रूप में कार्य करते हैं। इन तत्वों के माध्यम से वे यह स्थापित करते हैं कि जीवन की वास्तविक सफलता केवल बाह्य या भौतिक उपलब्धियों पर निर्भर नहीं करती, बल्कि वह व्यक्ति के आचरण, कर्त्तव्य-निष्ठा और नैतिक दृढ़ता पर आधारित होती है। इस प्रकार, उनकी कथाएँ पाठक को यह बोध कराती हैं कि जीवन में उच्च आदर्शों का पालन ही सच्चे अर्थों में सफलता और संतोष का मार्ग है।

'दिग्भ्रमित' नामक कथा राजाभोज, महाकवि कालिदास और एक वृद्धा के माध्यम से जीवन के सत्य को समझाती है। राजा और कालिदास किसी यात्रा के दौरान रास्ता भटक जाते हैं और एक वृद्धा से मार्ग पूछते हैं। वृद्धा सीधे उत्तर देने के बजाय उनसे प्रश्न पूछकर और तर्क के माध्यम से यह समझाती है कि वास्तव में भटकाव केवल रास्ते का नहीं, बल्कि मन और विचारों का होता है।

वृद्धा के संवादों से राजा और कालिदास को अपनी गलती का एहसास होता है। वे समझते हैं कि अहंकार और अज्ञान ही भटकने का कारण हैं। अंत में वे बुढ़िया से क्षमा माँगते हैं और सही मार्ग की ओर अग्रसर होते हैं।

शिव नारायण सिंह कहते हैं, "प्रिय विद्यार्थियों, यह जीवन ही भटकाव है। आपको इसमें से ही रास्ता ढूँढना है, रास्ते का पता लगाना है, रास्ते की खोज करनी है और मंजिल तक पहुँचना है। रास्ता खोजने के समय आप निश्चित ही कुछ न कुछ भ्रमित होते हैं। भ्रम आपको किस बात का होता है? यह आप भलीभाँति जानते हैं। राजा को राजा होने का अहंकार है, कालिदास को विद्वान होने का अहंकार है। क्या आपको कोई अहंकार नहीं है ? आपको तो और ढेर सारा अहंकार है। आप अपने को विद्वान समझते हैं, ज्ञानी समझते हैं, काबिल समझते हैं, सुन्दर समझते हैं, बलवान समझते हैं। यह सब क्या है ? यह सब भी कहीं न कहीं भ्रम है। जो आपके पास नहीं है, उसे आप समझते हैं कि है और जो है उसके बारे में आप सोचते ही नहीं हैं। जब तक यह स्थिति बनी रहेगी तब तक वही हाल रहेगा कि सबके बाद भी बुढ़िया से सबक लेना पड़ा"।6

पौराणिक तत्वों का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष उनकी प्रतीकात्मकता है। शिव नारायण सिंह इन तत्वों का उपयोग इस प्रकार करते हैं कि वे स्रोता और पाठक के भीतर गहरे स्तर पर प्रभाव उत्पन्न करें। उदाहरणत: संघर्षपूर्ण परिस्थितियाँ जीवन की परीक्षा का प्रतीक बन जाती हैं, जबकि आदर्श पात्र नैतिक चेतना के प्रतिनिधि के रूप में उभरते हैं। इस प्रकार, पौराणिक सन्दर्भों के माध्यम से वे जीवन की जटिलताओं को सरल और बोधगम्य बना देते हैं, जिससे स्रोता और पाठक सहज रूप से उनके सन्देश को आत्मसात कर पाता है।

इसके अतिरिक्त, उनकी बोधकथाओं में पौराणिक तत्व आदर्श और यथार्थ के बीच सन्तुलन स्थापित करने का कार्य भी करते हैं। वे यह दर्शाते हैं कि यद्यपि आदर्शों का पालन करना कठिन होता है, फिर भी वही व्यक्ति के चरित्र-निर्माण और व्यक्तित्व-विकास का आधार बनते हैं। कठिन परिस्थितियों में भी सत्य, धर्म और कर्त्तव्य के मार्ग पर बने रहना ही वास्तविक साहस और सफलता का प्रतीक है।

उपरोक्तानुसार शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में पौराणिक तत्व केवल साहित्यिक अलंकरण नहीं हैं, बल्कि वे जीवन-दर्शन के सशक्त माध्यम हैं। इनके माध्यम से वे न केवल भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को संरक्षित करते हैं, बल्कि उन्हें आधुनिक सन्दर्भ में पुनः स्थापित भी करते हैं। इस प्रकार, उनकी बोधकथाएँ पौराणिकता को एक जीवन्त, प्रासंगिक और प्रेरणादायक रूप में प्रस्तुत करती हैं, जो आज के समय में भी व्यक्ति के नैतिक और आध्यात्मिक विकास के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होती हैं।

पारम्परिक तत्व : लोक जीवन और सांस्कृतिक निरन्तरता –

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में पारम्परिक तत्वों की उपस्थिति अत्यन्त गहरी, व्यापक और अर्थपूर्ण है। उनकी कथाएँ भारतीय लोकजीवन, ग्रामीण परिवेश, सामाजिक सम्बन्धों तथा सांस्कृतिक परम्पराओं का ऐसा सजीव और यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती हैं, जो न केवल स्रोता और पाठक को आकर्षित करता है, बल्कि उसे अपने जीवन और समाज के साथ गहराई से जोड़ता भी है। इन कथाओं में परम्परा केवल अतीत का स्मरण नहीं है, बल्कि वह एक जीवन्त प्रक्रिया के रूप में उपस्थित है, जो वर्तमान जीवन को दिशा प्रदान करती है।

उनकी बोधकथाओं का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह है कि वे लोकजीवन को उसकी सम्पूर्ण वास्तविकता के साथ प्रस्तुत करती हैं। गाँव का परिवेश, साधारण मनुष्य का संघर्ष, श्रमशील जीवन, पारिवारिक सम्बन्ध और सामाजिक ताना-बाना ये सभी तत्व उनकी कथाओं में अत्यन्त स्वाभाविक रूप से समाहित हैं। यह यथार्थता कथाओं को कृत्रिम या आदर्शवादी होने से बचाती है और उन्हें जीवन के निकट लाती है, जिससे स्रोता और पाठक स्वयं को उन परिस्थितियों में अनुभव करने लगता है।

पारम्परिक तत्व कथाओं को यथार्थ से जोड़ने का कार्य करते हैं। वे स्रोता और पाठकों को अपने परिवेश, समाज और संस्कृति से पुनः जुड़ने का अवसर प्रदान करते हैं। इन कथाओं में परिवार को एक मूल इकाई के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जहाँ नैतिकता, संवेदना और उत्तरदायित्व का विकास होता है। गुरु-शिष्य सम्बन्ध को विशेष महत्त्व दिया गया है, जो भारतीय शिक्षा परम्परा की आत्मा है। यह सम्बन्ध केवल ज्ञान के आदान-प्रदान तक सीमित नहीं रहता, बल्कि चरित्र-निर्माण और जीवन-दृष्टि के निर्माण का माध्यम बनता है।

'गुरु दक्षिणा' शीर्षक नामक कथा में एक शिष्य के शिक्षा पूरी हो जाने के पश्चात गुरु को दक्षिणा देने हेतु अत्यन्त उत्साहित रहने के कारण उसके गुरु उससे दक्षिणा स्वरूप कोई व्यर्थ वस्तु माँगते हैं। व्यर्थ वस्तु के खोज के क्रम में मिट्टी, कूड़ा तथा गन्दे नाली के पानी को प्रथम दृष्टया व्यर्थ समझना परन्तु पुनः उसकी

उपयोगिता का विचार आता है।

'आप समझ सकते हैं, गुरु ने शिष्य से क्या कहा होगा ? गुरु ने अपने शिष्य से कहा- 'इस दुनिया में वही व्यर्थ है जो दूसरों को व्यर्थ समझता है। इस दुनिया में कोई भी चीज व्यर्थ नहीं है। प्रत्येक चीज का अपना महत्त्व है, जरूरत है उसका उचित मूल्यांकन करने की।

प्रिय विद्यार्थियों, इस घटनाक्रम में आपने देखा कि वह विद्यार्थी व्यर्थ की चीज खोजने में क्या कुछ नहीं बर्बाद करता है। वह व्यर्थ की चीज खोजने में अपना बहुमूल्य समय बर्बाद करता है और इस तरह अपने आपको ही व्यर्थ साबित करता है। क्या आप भी अपने आपको व्यर्थ साबित करना चाहेंगे ? अगर आप भी स्वयं को व्यर्थ साबित करना चाहते हैं, तो कोई बात नहीं। अगर नहीं तो आप क्या करेंगे ? आप समय के महत्त्व को समझेंगे'।"7

इसके अतिरिक्त, उनकी कथाओं में सामाजिक जिम्मेदारी और सामूहिक जीवन के मूल्य भी स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आते हैं। व्यक्ति को केवल अपने लिए नहीं, बल्कि समाज के लिए भी उत्तरदायी बताया गया है। सहयोग, सह-अस्तित्व, पारस्परिक सम्मान और सामूहिक प्रयास जैसे तत्व उनकी कथाओं में बार-बार दिखाई देते हैं, जो एक स्वस्थ और सन्तुलित समाज के निर्माण के लिए आवश्यक हैं। असल में साहित्यकार लोक-कल्याणकारी जीवन-मूल्यों से प्रेरित होकर ही आदर्श साहित्य का सृजन कर सकता है। वीरगाथा काल से आधुनिक युग के साहित्य में लोकहित की यह भावना किसी-न-किसी रूप में विद्यमान है। साहित्य में वर्णित मूल्य किसी वर्ग विशेष के जीवन मूल्य न होकर जनसामान्य के जीवन मूल्य होते हैं। इस सन्दर्भ में बैजनाथ सिंहल जी का कथन है, "मूल्यों को जन-जीवन की व्यावहारिकता में देखने के कारण ही साहित्य मूल्यों को कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के अध्ययन-अध्यापन एवं चर्चा परिचर्चा के सन्दर्भ विशेष से काटकर जन-सामान्य के लिए ज्ञेय बनाता है।"8

इसी कारण साहित्यकार का दायित्व अन्य बुद्धिजीवी वर्ग की तुलना में अधिक गंभीर है। शिव नारायण सिंह अपनी इस साहित्यिक जिम्मेदारी से भली-भाँति परिचित हैं, एक शिक्षक होने के नाते इस कर्त्तव्य का निर्वहन भी उनके लिए कुछ सहज बना मालूम पड़ता है।

शिव नारायण सिंह अपनी कथा 'मेरा क्या बिगड़ता है' में कहते हैं "एक दिन ऐसा हुआ कि एक ओर कुम्हार के बर्तन लदे हुए थे और दूसरी तरफ माली के फूल। माली ऊँट की नकेल, नकेल यानी वह रस्सी जो जानवरों के नाक में लगी रहती है जिसे पकड़कर आगे-आगे चला जाता है, पकड़े हुए था और उसका दोस्त कुम्हार पीछे-पीछे ऊँट को हाँक रहा था। आधे रास्ते में पहुँचते ही ऊँट को भूख लग जाती है, वह पीछे गर्दन घुमा-घुमाकर माली के फूलों को खाने लगता है। माली आगे रहता है। वह सोचता है कि उसका दोस्त पीछे है ही, उसे पीछे मुड़कर देखने की क्या जरूरत है। माली आगे-आगे चलता रहता है और ऊँट पीछे मुड़-मुड़कर माली के फूल खाता रहता है। इधर कुम्हार सोचता है कि ठीक है, ऊँट माली के ही फूल खा रहा है, इससे मेरा क्या बिगड़ता है ? और वह ऊँट को टोकता नहीं है, रोकता नहीं है, मना नहीं करता है। ऊँट फूल खा रहा है, आप समझ रहे होंगे कि क्या घटना घटने वाली है फूल और बर्तनो में एक सन्तुलन है, जिसके कारण ये दोनों सामान ऊँट की पीठ पर रुके हुए हैं। जैसे ही फूल का वजन कम होता है, ऊँट की पीठ पर रखे हुए मिट्टी के बर्तन पलट जाते हैं। फूल का वजन कम हुआ और ऊँट की पीठ पर रखा हुआ सामान पलट गया, नुकसान किसका हुआ यह बताने की जरूरत नहीं है। सारे-के-सारे मिट्टी के बर्तन फूट गये, लेकिन तब भी कुछ फूल तो शेष बच ही गये'।"9

इस कथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह सह-अस्तित्व और सन्तुलन की अवधारणा को अत्यन्त सूक्ष्म एवं दार्शनिक स्तर पर प्रतिपादित करते हैं। कुम्हार का "मेरा क्या बिगड़ता है" वाला दृष्टिकोण वस्तुतः सामाजिक उदासीनता, संकीर्ण स्वार्थपरता तथा उत्तरदायित्वहीनता का द्योतक है। यह मानसिकता व्यक्ति को व्यापक सामाजिक संरचना से काटकर केवल अपने तात्कालिक हितों तक सीमित कर देती है।

कथा में ऊँट पर रखे गए फूल और बर्तन केवल भौतिक वस्तुएँ नहीं हैं, बल्कि वे समाज के विभिन्न घटकों के बीच विद्यमान सन्तुलन और परस्पर निर्भरता के प्रतीक हैं। जैसे ही एक पक्ष (फूल) का भार कम होता है, सम्पूर्ण व्यवस्था का सन्तुलन भंग हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप दूसरे पक्ष (बर्तन) का विनाश हो जाता है। यह संकेत करता है कि किसी भी सामाजिक, आर्थिक या नैतिक तंत्र में एक पक्ष की उपेक्षा अंततः समग्र व्यवस्था को संकटग्रस्त कर देती है।

अतः शिव नारायण सिंह यह प्रतिपादित करते हैं कि समाज में प्रत्येक व्यक्ति का दायित्व केवल स्वयं तक सीमित नहीं है, बल्कि वह सामूहिक उत्तरदायित्व का अंग है। यदि व्यक्ति उदासीन रहकर अन्याय, हानि या असन्तुलन को बढ़ने देता है, तो वह अप्रत्यक्ष रूप से उस विनाश का सहभागी बन जाता है, जो अंततः उसे भी प्रभावित करता है। शिव नारायण सिंह समझते हैं कि साहित्यकार साहित्य में केवल कोरे आदर्शों की बातें नहीं कर सकता अपितु उसके विचार एवं अभिव्यक्तियों वास्तविकताओं से परिचालित होना आवश्यक है। डॉ. नत्थूलाल गुप्त नवल के अनुसार, "वही साहित्य वरणीय एवं राष्ट्र की स्थायी निधि हो सकता है जिसकी आत्मा सत्यानुप्राणित हो, जिसके रूप में सहज सौंदर्य और जिसका उद्देश्य बहुजन हित अथवा 'सर्वजन हित' के रूप में शिवत्वमय हो।"10

बौद्धिक तत्व : विवेक और आत्मचिंतन

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं का तीसरा और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आयाम है—बौद्धिकता, जो उनकी कथाओं को केवल नैतिक या भावनात्मक शिक्षाओं तक सीमित नहीं रहने देती, बल्कि उन्हें एक गहन चिंतनशील और आत्मपरक साहित्यिक रूप प्रदान करती है। उनकी कथाएँ स्रोता और पाठकों को निष्क्रिय रूप से सन्देश ग्रहण करने के लिए प्रेरित नहीं करतीं, बल्कि उन्हें सक्रिय रूप से सोचने, प्रश्न करने, विश्लेषण करने और आत्मचिंतन की प्रक्रिया में संलग्न होने के लिए प्रेरित करती हैं। इस दृष्टि से उनकी बोधकथाएँ बौद्धिक जागरण का एक प्रभावशाली माध्यम बन जाती हैं।

उनकी कथाओं में तर्क और विवेक का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे जीवन की ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करते हैं, जहाँ पाठक को स्वतः यह विचार करना पड़ता है कि सही क्या है और गलत क्या है ? इस प्रकार कथाएँ केवल निष्कर्ष नहीं देतीं, बल्कि पाठक को निष्कर्ष तक पहुँचने की प्रक्रिया में शामिल करती हैं। यही प्रक्रिया बौद्धिक विकास का मूल आधार है, क्योंकि इससे व्यक्ति में स्वतंत्र चिंतन की क्षमता विकसित होती है।

अपने विद्यार्थियों को 'तपश्चर्या' नामक कथा के माध्यम से वृक्ष तथा राहगीर के संवाद के द्वारा वृक्ष के फलों से लदे होने के पीछे के संघर्ष का बोध कराते हैं।

"प्रिय विद्यार्थियों, मेरा तो आपसे केवल इतना ही कहना है आपके पास वे सब साधन हैं, सुविधाएँ हैं, परिस्थितियाँ हैं, बस एक इसी की कमी है कि आप तपश्चर्या से भागते हैं। तो जब तक भागेंगे, भागते रह जायेंगे। चूँकि वृक्ष भाग नहीं सका, या यूँ कहूँ कि भाग नहीं सकता, रुक गया, डट गया, लग गया, देखें क्या से क्या हो गया ? आप भी भागें नहीं, रुकें, डटें, तपश्चर्या करें, देखें आप कहाँ नहीं पहुँच जाते हैं। आप जहाँ चाहें पहुँच सकते हैं।"11

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं की एक विशेषता यह भी है कि वे स्रोता और पाठक के भीतर प्रश्नाकुलता को जन्म देती हैं। वे प्रत्यक्ष रूप से उत्तर देने के बजाय अप्रत्यक्ष रूप से ऐसे प्रश्न खड़े करती हैं, जो स्रोता और पाठक को स्वयं अपने जीवन, अपने कर्मों और अपने निर्णयों पर पुनर्विचार करने के लिए प्रेरित करते हैं। यह प्रश्नात्मक शैली व्यक्ति को बाह्य अनुकरण से हटाकर आन्तरिक बोध की ओर ले जाती है।

विनम्रता का पाठ पढ़ाते हुए वे कहते हैं, "पानी सदैव ढाल की तरफ बहता है, हवा सदैव अधिक दाब से कम दाब की ओर बहती है ; तो क्या कुछ पाने के लिए आपको झुकना नहीं पड़ेगा'? "12

उपरोक्त कथन से प्रथम दृष्टया, जल का सदैव ऊँचाई से निम्नता की ओर प्रवाहित होना केवल भौतिक नियम नहीं, अपितु एक सांकेतिक प्रतिपादन है, जिसमें "ऊँचाई" अहंकार, दंभ एवं आत्म-अभिमान का द्योतक है, जबकि 'निम्नता' विनम्रता, सरलता तथा ग्रहणशीलता का प्रतीक है। इसी प्रकार, वायु का उच्च दाब से निम्न दाब की ओर गमन भी सन्तुलन स्थापना की स्वाभाविक प्रवृत्ति को इंगित करता है। प्रकृति का यह सन्तुलन-नियम इस तथ्य को पुष्ट करता है कि जहाँ कठोरता, अधिकता या अहं की प्रधानता होती है, वहाँ से प्रवाह उस दिशा में होता है जहाँ रिक्तता, विनम्रता और स्वीकार्यता विद्यमान हो।

दूसरे शब्दों में यह कथन इस सिद्धान्त की पुष्टि करता है कि ज्ञान, अनुभव तथा सफलता का अधिग्रहण केवल उसी व्यक्ति द्वारा सम्भव है, जो स्वयं को विनीत बनाकर नवीनता को ग्रहण करने के लिए तत्पर हो। "झुकना" यहाँ दासता या दुर्बलता का प्रतीक न होकर, आत्म-विस्तार एवं आत्म-उत्कर्ष का माध्यम है। विनम्रता व्यक्ति को न केवल सामाजिक समन्वय प्रदान करती है, बल्कि उसे बौद्धिक और आध्यात्मिक उन्नति के पथ पर अग्रसर भी करती है।

"सिद्धार्थ महात्मा बुद्ध तभी बने जब वे राज-

पाट छोड़ दिये, महल की सारी सुख-सुविधाएँ छोड़ दिये और सामान्य जीवन जीने लगे। भगवान श्रीराम को भी अपनी व्यापकता सिद्ध करने के लिए अयोध्या छोड़नी पड़ी थी'।"13

बौद्धिक तत्वों का एक महत्त्वपूर्ण पहलू आत्मचिंतन है। उनकी कथाएँ व्यक्ति को अपने भीतर झाँकने के लिए प्रेरित करती हैं वह क्या सोचता है ? क्या करता है और क्यों करता है ? यह आत्मविश्लेषण व्यक्ति को अपने गुणों और कमजोरियों को पहचानने में सहायता करता है, जिससे वह अपने व्यक्तित्व का सन्तुलित विकास कर सकता है। इस प्रकार, उनकी बोधकथाएँ केवल ज्ञान प्रदान नहीं करतीं, बल्कि आत्मबोध का मार्ग भी प्रशस्त करती हैं।

"मैं फिर कहता हूँ, आप लोगों में वह सब कुछ है, जो एक मूर्ख को विद्वान् बना सकता है, बीमार को पहलवान बना सकता है, निर्धन को धनवान बना सकता है। अभागे को सौभाग्यशाली, तुच्छ को महान, गुणहीन को गुणवान, पतित को समुन्नत, क्या नहीं बना सकता है ! और कैसे कहूँ कि वह क्षमता है आपमें। फिर भी आप कृपण हैं, कन्टिन्यूटी नहीं है आपमें और थोड़ी-सी ईमानदारी की कमी भी है। एक बार सोचें, विचार करें और दृढ़ निश्चय करें तो निश्चित रूप से आप वह सब कुछ कर सकते हैं जो करना चाहते हैं। उस प्रेत में ऐसा कुछ नहीं था बस यही गुण था उसमें कि वह कृपण नहीं था। उसने जो जिम्मेदारी ली उसे तुरन्त निभाया और जो चाहा सो कर दिया।"14

इसके अतिरिक्त, उनकी कथाएँ निर्णय क्षमता के विकास में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। जीवन में अनेक परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं, जहाँ व्यक्ति को त्वरित और सही निर्णय लेना होता है। उनकी बोधकथाएँ ऐसी ही परिस्थितियों का चित्रण करती हैं, जहाँ स्रोता और पाठक स्वयं को उन स्थितियों में रखकर सोचता है और निर्णय लेने का अभ्यास करता है। यह अभ्यास उसे वास्तविक जीवन में अधिक सजग, सन्तुलित और आत्मविश्वासी बनाता है। बौद्धिक तत्व व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाने में भी सहायक होते हैं। उनकी कथाएँ यह स्पष्ट करती हैं कि जीवन में केवल दूसरों के बताए मार्ग पर चलना पर्याप्त नहीं है, बल्कि व्यक्ति को अपने विवेक के आधार पर निर्णय लेना चाहिए। यह दृष्टिकोण व्यक्ति को स्वतंत्र सोचने और अपने कर्मों की जिम्मेदारी स्वीकार करने के लिए प्रेरित करता है। इस प्रकार, उनकी बोधकथाएँ व्यक्ति को एक जागरूक, उत्तरदायी और आत्मनिर्भर नागरिक बनने की दिशा में अग्रसर करती हैं।

आधुनिक सन्दर्भ में, जहाँ सूचना की अधिकता है लेकिन गहन चिंतन का अभाव है, वहाँ शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ बौद्धिक सन्तुलन स्थापित करने का कार्य करती हैं। वे यह सिखाती हैं कि केवल जानकारी प्राप्त करना पर्याप्त नहीं है, बल्कि उसका विश्लेषण, मूल्यांकन और उचित उपयोग करना भी आवश्यक है।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में बौद्धिक तत्व केवल तर्कशीलता का विकास नहीं करते, बल्कि वे व्यक्ति के समग्र मानसिक और चेतन विकास का आधार बनते हैं। उनकी कथाएँ स्रोता और पाठक को विचारशील, आत्मविश्लेषी, विवेकशील और निर्णयक्षम बनाती हैं। इस प्रकार, ये बोधकथाएँ न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं, बल्कि बौद्धिक जागरण और व्यक्तित्व-निर्माण के लिए भी अत्यन्त प्रभावशाली माध्यम सिद्ध होती हैं।

त्रिवेणी का समन्वय: समग्र जीवन-दृष्टि

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वैशिष्ट्य यह है कि उनमें पौराणिकता, परम्परा और बौद्धिकता इन तीनों धाराओं का अद्वितीय एवं सन्तुलित समन्वय दृष्टिगत होता है। यह समन्वय किसी बाह्य संयोजन का परिणाम नहीं है, अपितु एक स्वाभाविक एवं सुसंगत प्रक्रिया है, जो उनकी कथाओं को समग्र जीवन-दृष्टि से संपन्न बनाती है। यदि पौराणिक तत्व उनकी कथाओं को आदर्श और नैतिक आधार प्रदान करते हैं, पारम्परिक तत्व उन्हें सामाजिक यथार्थ और सांस्कृतिक जड़ों से जोड़ते हैं, तो बौद्धिक तत्व उन्हें चिंतनशीलता, तर्कशीलता और आत्मविश्लेषण की दिशा में उन्मुख करते हैं। इन तीनों का समन्वय ही उनकी बोधकथाओं को विशिष्ट एवं प्रभावशाली बनाता है।

पौराणिक तत्वों के माध्यम से वे जीवन के शाश्वत मूल्यों, धर्म, सत्य, कर्त्तव्य और त्याग को स्थापित करते हैं। ये तत्व व्यक्ति को यह बोध कराते हैं कि जीवन का वास्तविक उद्देश्य केवल भौतिक सफलता नहीं, बल्कि नैतिक और आध्यात्मिक उत्कर्ष भी है। दूसरी ओर, पारम्परिक तत्व उनकी कथाओं को जीवन की ठोस भूमि पर स्थापित करते हैं। लोकजीवन, सामाजिक सम्बन्ध, पारिवारिक संरचना और सांस्कृतिक निरन्तरता के माध्यम से वे यह दर्शाते हैं कि व्यक्ति का अस्तित्व समाज से अभिन्न रूप से

जुड़ा हुआ है। इस प्रकार, उनकी कथाएँ आदर्श और यथार्थ के बीच एक सन्तुलित सेतु का निर्माण करती हैं।

बौद्धिक तत्व इस समन्वय को और अधिक सशक्त बनाते हैं। वे स्रोता और पाठक को केवल आदर्शों का अनुकरण करने के लिए प्रेरित नहीं करते, बल्कि उन्हें उन आदर्शों के औचित्य पर विचार करने, उनका विश्लेषण करने और उन्हें अपने जीवन में सार्थक रूप से लागू करने की प्रेरणा देते हैं। इस प्रकार, उनकी कथाएँ अंधानुकरण के स्थान पर विवेकपूर्ण स्वीकृति की भावना को विकसित करती हैं। स्रोता और पाठक केवल 'क्या करना चाहिए' यह नहीं सीखता, बल्कि 'क्यों करना चाहिए' और 'कैसे करना चाहिए' इन प्रश्नों के उत्तर भी खोजने लगता है। शिव नारायण सिंह की कहानियों में मूल्य उन्हें और अधिक प्रेषणीय व प्राणवान बना देते हैं, धर्मवीर भारती के अनुसार, "साहित्य में शब्द तभी समर्थ, प्रेषणीय और प्राणवान बनते हैं, जब उनमें मानवीय मूल्य आन्तरिक रूप से प्रतिष्ठित रहता है।"15

इस त्रिवेणी समन्वय का परिणाम यह होता है कि उनकी बोधकथाएँ व्यक्ति को एक समग्र, सन्तुलित और व्यापक जीवन-दृष्टि प्रदान करती हैं। वे व्यक्ति के नैतिक, सामाजिक और बौद्धिक—तीनों आयामों को एक साथ स्पर्श करती हैं। जहाँ पौराणिकता उसे मूल्यबोध देती है, परम्परा उसे सामाजिक आधार प्रदान करती है, वहीं बौद्धिकता उसे आत्मनिर्भर और विचारशील बनाती है।

निष्कर्ष – अब तो निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ केवल शिक्षाप्रद आख्यान नहीं हैं, बल्कि वे जीवन के विविध आयामों को समाहित करने वाली एक समग्र दार्शनिक दृष्टि का प्रतिपादन करती हैं। पौराणिकता, परम्परा और बौद्धिकता की यह त्रिवेणी न केवल भारतीय सांस्कृतिक चेतना को सुदृढ़ करती है, बल्कि आधुनिक मनुष्य को भी सन्तुलित, सजग और उत्तरदायी जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करती है।

सन्दर्भ सूची–

1. यायावर, भारत: 'रेणु का है अन्दाजें-बयाँ और', राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-02, पहला संस्करण 2014, पृष्ठ संख्या – 20-21
2. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 05 , प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 47
3. डॉ. नत्थूलाल गुप्त नवल, मानव मूल्य, संस्कृति और साहित्य, पृष्ठ संख्या – 52
4. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 76
5. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 77
6. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 82
7. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 03
8. बैजनाथ सिंहल, साहित्य, मूल्य और प्रयोग, पृष्ठ संख्या – 10
9. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 01, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 15
10. नत्थूलाल गुप्त नवल, मानव मूल्य संस्कृति और साहित्य, पृष्ठ संख्या – 46
11. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 134
12. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 03, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 220
13. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 03, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 220
14. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 04, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 121
15. धर्मवीर भारती ग्रन्थावली सं. चन्द्रकान्त बांदिवडेकर, खण्ड: पाँच, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण: 2009, पृष्ठ संख्या – 274,

वर्ष: 2026 | वॉल्यूम: 02 | अंक: 03 | कुल अंक: 04

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में कर्मवाद : भारतीय चिंतन परम्परा के विशेष परिप्रेक्ष्य में

शिखा सिंह
शोधार्थी
बोधकथा शोध संस्थान
शिवलोक, गोरखपुर उ. प्र.

सारांश– यह शोध-पत्र भारतीय चिंतन में कर्मवाद की बहुआयामी अवधारणा का सूक्ष्म परीक्षण प्रस्तुत करता है। भारतीय दार्शनिक परम्परा में कर्म को केवल क्रिया नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास की आधार शक्ति माना गया है। शोध का मुख्य उद्देश्य चार प्रमुख स्रोतों—भगवद्गीता, पतंजलि योगदर्शन, कबीर के दोहे तथा शिव नारायण सिंह की बोध कथाओं में निहित कर्मवाद के रूपों, उद्देश्यों तथा दार्शनिक सरोकारों का तुलनात्मक अध्ययन करना है। भगवद्गीता में कर्मयोग 'निष्काम भाव', 'कर्त्तव्य-पालन' तथा 'अहंकार का विसर्जन' पर आधारित है । योगदर्शन कर्म योग के मार्ग में उत्पन्न मानसिक संस्कारों को निर्मल बनाने का साधन है।

कबीर के दोहों में कर्मवाद सामाजिक-सांस्कृतिक सन्दर्भ में आता है—जहाँ कर्म को नैतिक, व्यावहारिक और आत्मिक उन्नति का माध्यम कहा गया है तथा शिव नारायण सिंह की कथाओं में कर्मवाद अत्यन्त लोक-व्यावहारिक रूप में मिलता है। उनकी कथाएँ श्रम, कत्तर्व्य-निष्ठा, गुरु-शिष्य सम्बन्ध, चरित्र-निर्माण और जीवन-आदर्शों के निर्माण में कर्म को मूल तत्व मानती हैं। इन चारों ग्रंथों का तुलनात्मक अध्ययन दर्शाता है कि भिन्न ऐतिहासिक, सामाजिक और भाषाई संरचनाओं के बावजूद, इन सभी में कर्म को स्व-विकास, नैतिक पहचान, आत्मसाक्षात्कार और लोक कल्याण का केन्द्रीय तत्व माना गया है। प्रस्तुत शोध यह स्थापित करता है कि कर्मवाद भारतीय चिंतन में एक सतत, बहुरंगी और व्यावहारिक दर्शन है, जो आध्यात्मिकता और जीवन-दृष्टि दोनों को समान रूप से प्रभावित करता है तथा शिव नारायण सिंह जी की बोधकथाओं में इसकी व्यापकता अत्यन्त सूक्ष्म एवं व्यावहारिक है।

बीज-शब्द– कर्म, कर्त्तव्य, बोध, दर्शन, भगवद्गीता, कबीर, पतंजलि, कथा

प्रस्तावना- भारतीय शिक्षा परम्परा में शिक्षक को केवल ज्ञान देने वाला नहीं, बल्कि जीवन का मार्गदर्शक माना गया है। ऐसे ही प्रेरणादायक शिक्षक और विद्वान के रूप में शिव नारायण सिंह का नाम अत्यन्त सम्मान के साथ लिया जाता है। वे न केवल एक कुशल शिक्षक हैं, बल्कि विद्यार्थियों के व्यक्तित्व निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले अद्भुत मार्गदर्शक भी हैं। उनके अन्दर शिक्षा के प्रति समर्पण, छात्रों के प्रति सम्भाव और समाज के प्रति उत्तरदायित्व की गहरी भावना प्रकट होती है। उनका कहना है कि वे शिक्षा को केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित नहीं रखते, बल्कि जीवन के बारे में बताते हैं एक आदर्श शिक्षक के रूप में वे विद्यार्थियों को केवल पढ़ाते ही नहीं, बल्कि उन्हें सही दिशा में विचार और निर्णय लेने की प्रेरणा भी देते हैं। शिव नारायण सिंह उत्तर प्रदेश के एक छोटे से जनपद देवरिया में देश के भविष्य के निर्माताओं के निर्माणस्थली अर्थात् विद्यालय के संस्थापक प्राचार्य हैं, जिनका उद्देश्य यह है कि वह अपने विद्यार्थियों को वर्तमान सामाजिक परिवेश के अनुरूप तैयार कर सकें। उनकी बोधकथाएँ और कथात्मक रचनाएँ किस प्रकार लोकभाषा, सहज शैली और कथोपकथन की पद्धति के माध्यम से कर्मवाद को पुनर्जीवित करती हैं। उनके साहित्य में कथा केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं है, बल्कि वह जीवन-दर्शन, सामाजिक चेतना और मानवीय संवेदनाओं का सशक्त माध्यम बनकर उभरती हैं। उनकी रचनाओं में लोकजीवन के अनुभव, नैतिक शिक्षा, सामाजिक जिम्मेदारी तथा मानवीय सह-अस्तित्व की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है, जो वाचिक परम्परा की मूल

विशेषताओं से साम्य रखती है। शिव नारायण सिंह ने इस कर्मवाद की परम्परा को आगे बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं।

एक शिक्षक के ऊपर सबसे बड़ा उत्तरदायित्व भावी पीढ़ी के अन्दर नैतिक चेतना, सामाजिक चेतना, राजनैतिक चेतना व भौगोलिक चेतना जैसे मूल्यों को विकसित करना है। हमारे भारतवर्ष व समाज में ऐसे मानवीय मूल्यों को स्पष्टता प्रदान करने की जिम्मेदारी शिक्षकों के ही कन्धों पर है। शिव नारायण सिंह अपनी इस जिम्मेदारी को भली-भाँति समझते हैं और इसे पूर्ण करने का प्रयास भी करते हैं। भारतीय साहित्य में कथा-कहानी की परम्परा में केवल मनोरंजन का साधन नहीं रह रहा है, बल्कि यह जीवन का साधन, मनोरंजन और कर्म के महत्त्व को मनोरंजक माध्यम भी बना रहा है। इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए शिव नारायण सिंह ने अपनी बोधकथाओं के माध्यम से समाज और विशेष रूप से विद्यार्थियों को जीवन की सही दिशा बताने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। उनकी कहानियाँ सरल भाषा में गहन विचार प्रस्तुत करती हैं, जिनका मूल आधार कर्मवाद है।

उनके अन्दर शिक्षा के प्रति समर्पण, छात्रों के प्रति सम्भाव और समाज के प्रति उत्तरदायित्व की गहरी भावना प्रकट होती है।उनका कहना है कि वे शिक्षा को केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित नहीं रखते, बल्कि जीवन के बारे में बताते हैं एक आदर्श शिक्षक के रूप में वे विद्यार्थियों को केवल पढ़ाते ही नहीं, बल्कि उन्हें सही दिशा में विचार और निर्णय लेने की प्रेरणा भी देते हैं। उनकी कहानियाँ विद्यार्थियों के अभिनय, अनुशासन, परिश्रम और उत्तरदायित्व जैसे गुणों का विकास करती हैं। बच्चों को यह समझाते हैं कि जीवन में सफलता पाने में कर्म ही सबसे बड़ा साधन है, और निरन्तर प्रयास ही व्यक्ति को ऊँचाई तक पहुँचता है। वे अपनी कथाओं को केवल आदर्शवाद तक सीमित नहीं रखते, बल्कि उन्हें जीवन के यथार्थ से जोड़ते हैं। उनकी बोधकथाएँ विद्यार्थियों के दैनिक जीवन, उनके संघर्ष, निर्णय और नैतिक दुविधाओं को केंद्र में रखकर रची गई हैं। यही कारण है कि उनकी कहानियाँ सीधे मन पर प्रभाव डालती हैं और श्रोता तथा पाठकों को कर्म के महत्त्व का बोध कराती हैं। वे यह स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि जीवन में सफलता और असफलता का निर्धारण भाग्य नहीं, बल्कि व्यक्ति के कर्म करते हैं।

उनकी कथाओं में कर्मवाद एक अत्यन्त सशक्त और व्यावहारिक रूप में उभरकर सामने आता है। वे यह सन्देश देते हैं कि हर व्यक्ति के सामने दो रास्ते होते हैं- एक सही कर्म का और दूसरा गलत कर्म का। व्यक्ति का चुनाव ही उसके भविष्य को निर्धारित करता है। इस प्रकार, उनकी बोधकथाएँ यह सिखाती हैं कि कर्म ही जीवन की दिशा और दशा दोनों को तय करता है। उनके द्वारा प्रस्तुत उदाहरण सरल होते हुए भी अत्यन्त गहरे अर्थ वाले होते हैं, जो श्रोता और पाठक को आत्ममंथन के लिए प्रेरित करते हैं।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में यह भी विशेष रूप से देखा जाता है कि वे केवल उपदेशात्मक नहीं हैं, बल्कि संवादात्मक और प्रेरणादायक हैं। वे विद्यार्थियों को यह समझाने का प्रयास करते हैं कि केवल आदर्शों की बातें करना पर्याप्त नहीं है, बल्कि उन्हें व्यवहार में उतारना ही सच्चा कर्म है। उनकी कहानियाँ व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनने, कठिन परिस्थितियों में भी सही निर्णय लेने और अपने कर्त्तव्यों के प्रति सजग रहने की प्रेरणा देती हैं।

आधुनिक युग में जहाँ भौतिकता और प्रतिस्पर्धा ने नैतिक मूल्यों को चुनौती दी है, वहाँ शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ कर्मवाद के माध्यम से एक संतुलित और सकारात्मक जीवन दृष्टि प्रदान करती हैं। वे यह सिद्ध करते हैं कि सच्ची सफलता वही है जो ईमानदार और सत्कर्मों के आधार पर प्राप्त की जाए। उनकी कथाएँ यह भी बताती हैं कि हर कर्म का परिणाम अवश्य मिलता है, इसलिए व्यक्ति को सदैव अच्छे कर्मों का चयन करना चाहिए।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में कर्मवाद केवल एक दार्शनिक सिद्धान्त के रूप में प्रस्तुत नहीं होता, बल्कि वह जीवन के व्यावहारिक सत्य के रूप में उभरकर सामने आता है। उनकी कथाएँ यह स्पष्ट करती हैं कि मनुष्य का वर्तमान और भविष्य उसके कर्मों की परिणति है। इस प्रकार, वे भाग्यवाद की अपेक्षा कर्मवाद को अधिक महत्त्व देते हुए यह स्थापित करते हैं कि व्यक्ति स्वयं अपने जीवन

का निर्माता है।

उनकी बोधकथाओं में बार-बार यह विचार उभरता है कि प्रत्येक मनुष्य के सामने जीवन में अनेक विकल्प उपस्थित होते हैं। ये विकल्प ही उसके कर्मक्षेत्र का निर्माण करते हैं। सही और गलत के बीच चयन करना ही वास्तविक परीक्षा है, और यही चयन आगे चलकर उसके जीवन की दिशा निर्धारित करता है। शिव नारायण सिंह इस सत्य को अत्यन्त सरल और प्रभावशाली कथानकों के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं, जिससे श्रोता और पाठक सहज रूप से इस गूढ़ विचार को आत्मसात कर लेता है।

कर्मवाद का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष उनकी कथाओं में 'परिणाम की अनिवार्यता' के रूप में सामने आता है। वे यह स्पष्ट करते हैं कि कोई भी कर्म निष्फल नहीं जाता। प्रत्येक कर्म का प्रतिफल निश्चित होता है चाहे वह तुरन्त मिले या समय के साथ। इस दृष्टि से उनकी बोधकथाएँ नैतिक अनुशासन और आत्म-जवाबदेही की भावना को सुदृढ़ करती हैं। श्रोता और पाठक यह समझने लगता है कि उसके द्वारा किया गया प्रत्येक कार्य उसके जीवन को प्रभावित करता है। इन्होंने अपनी बोधकथाओं के माध्यम से कर्मवाद को न केवल स्पष्ट किया है, बल्कि उसे जीवन में उतारने योग्य भी बनाया है। उनकी रचनाएँ आज के विद्यार्थियों और समाज के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में कार्य करती हैं, जो उन्हें सही दिशा में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती हैं। इस प्रकार, उनका साहित्य कर्मप्रधान जीवन की सशक्त वकालत करता है और मानव जीवन को सार्थक बनाने की दिशा में महत्त्वपूर्ण योगदान देता है।

इसके अतिरिक्त, उनकी कथाओं में कर्मवाद का सम्बन्ध केवल व्यक्तिगत सफलता से नहीं, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्व से भी जोड़ा गया है। वे यह दर्शाते हैं कि व्यक्ति के कर्म समाज पर भी प्रभाव डालते हैं। यदि व्यक्ति अपने कर्तव्यों का पालन ईमानदारी और निष्ठा से करता है, तो वह न केवल अपने जीवन को संवारता है, बल्कि समाज में भी सकारात्मक परिवर्तन लाता है। इस प्रकार, शिव नारायण सिंह का कर्मवाद व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों स्तरों पर सन्तुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। अंततः, यह कहा जा सकता है कि शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में कर्मवाद एक जीवन्त और प्रेरणादायक तत्व के रूप में उपस्थित है। उनका यह दृष्टिकोण पाठकों को निष्क्रियता से निकालकर सक्रिय, जागरूक और उत्तरदायी जीवन जीने के लिए प्रेरित करता है। इस प्रकार, उनका साहित्य न केवल ज्ञान प्रदान करता है, बल्कि जीवन को सही दिशा में अग्रसर करने का मार्ग भी दिखाता है। उनकी कथाएँ यह स्पष्ट करती हैं कि मनुष्य का वर्तमान और भविष्य उसके कर्मों की परिणति है। इस प्रकार, वे भाग्यवाद की अपेक्षा कर्मवाद को अधिक महत्त्व देते हुए यह स्थापित करते हैं कि व्यक्ति स्वयं अपने जीवन का निर्माता है।

उनकी बोधकथाएँ यह सिखाती हैं कि कर्म ही जीवन की दिशा और दशा दोनों को तय करता है। उनके द्वारा प्रस्तुत उदाहरण सरल होते हुए भी अत्यन्त गहरे अर्थ रखते हैं, जो श्रोता और पाठक को आत्ममंथन के लिए प्रेरित करते हैं। उनकी कथाओं में कर्मवाद का अत्यन्त सशक्त और व्यावहारिक रूप उभरकर सामने आता है। वे यह सन्देश देते हैं कि हर व्यक्ति के सामने दो रास्ते होते हैं-एक सही कर्म का और दूसरा गलत कर्म का। व्यक्ति का चुनाव ही उसके भविष्य को निर्धारित करता है। इस प्रकार, उनकी बोधकथाएँ यह सिखाती हैं कि कर्म ही जीवन की दिशा और दशा दोनों को तय करता है। उनके द्वारा प्रस्तुत उदाहरण सरल होते हुए भी अत्यन्त गहरे अर्थ रखते हैं, जो श्रोता और पाठक को आत्ममंथन के लिए प्रेरित करते हैं।

कर्मवाद का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष उनकी कथाओं में 'परिणाम की अनिवार्यता' के रूप में सामने आता है। वे यह स्पष्ट करते हैं कि कोई भी कर्म निष्फल नहीं जाता। प्रत्येक कर्म का प्रतिफल निश्चित होता है- चाहे वह तुरन्त मिले या समय के साथ। इस दृष्टि से उनकी बोधकथाएँ नैतिक अनुशासन और आत्म-जवाबदेही की भावना को सुदृढ़ करती हैं। श्रोता और पाठक यह समझने लगता है कि उसके द्वारा किया गया प्रत्येक कार्य उसके जीवन को प्रभावित करता है। इस शोध के अन्तर्गत उनकी बोधकथाओं तथा साहित्यिक कृतियों का अध्ययन कर यह समझने का प्रयास

किया गया है कि उन्होंने किस प्रकार कथन-शैली, प्रतीकों और लोकानुभव के माध्यम से कर्मवाद आधुनिक सन्दर्भों में पुनर्स्थापित किया है।

कर्म की अवधारणा एवं कर्मवाद-

कर्म– "यत् कुर्वन्ति तत् कर्म।"

जो कार्य किए जाते हैं, उन्हें कर्म कहते हैं।1

"कर्त्तव्यस्यक्रिया कर्म कर्मनान्यदपेक्षते।"

कर्त्तव्य की क्रिया को कर्म कहते हैं। कर्म को किसी दूसरे कारण की अपेक्षा नहीं होती।"2

कर्मवाद– कर्मवाद की प्रथम अनुभूति वैदिक यज्ञ के विधान में होती है। वैदिक विश्वास के अनुसार यदि यज्ञ का विधिवत् संपादन किया जाए तो उससे एक अदृश्य शक्ति उत्पन्न होती है। इसे अदृष्ट अथवा अपूर्व कहते हैं। यही उचित अवसर आने पर यज्ञ के वांछित फल को उत्पन्न करती है। इस प्रकार यज्ञ का फल मनुष्य को अवश्य प्राप्त होता है। इस कर्म और फल के सम्बन्ध की सार्वभौम नियम के रूप में अभिव्यक्ति सर्वप्रथम ऋग्वेद के ऋत के सिद्धान्त में मिलती है जो जगत् की भौतिक तथा नैतिक व्यवस्था का आधार है। देवता तथा मनुष्य सभी इसका पालन करते हैं।

कर्म का शाश्वत तथा सार्वभौम नियम जगत् की नैतिक व्यवस्था का आधार है। इसका और अधिक स्पष्ट रूप में प्रतिपादन उपनिषदों में किया गया है। बृहदारण्यक के अनुसार मनुष्य का कर्म ही उसके साथ जाता है। मनुष्य अच्छे बुरे जो भी कर्म करता है उसके लिए नैतिक दृष्टि से वह पूर्ण रूप से जिम्मेदार है। शिव नारायण सिंह की कथाएँ यह स्पष्ट करती हैं कि मनुष्य का वर्तमान और भविष्य उसके कर्मों की परिणति है। इस प्रकार, वे भाग्यवाद की अपेक्षा कर्मवाद को अधिक महत्त्व देते हुए यह स्थापित करते हैं कि व्यक्ति स्वयं अपने जीवन का निर्माता है।

शिव नारायण सिंह एवं भगवद्गीता में कर्मवाद की एकरूप धारा– भारतीय दर्शन में भगवद्गीता कर्मवाद का सर्वश्रेष्ठ शास्त्रीय आधार प्रस्तुत करती है, जहाँ कर्म को न केवल कर्त्तव्य, बल्कि आध्यात्मिक साधना और जीवन-धर्म के रूप में समझाया गया है। गीता का सन्देश— निष्काम कर्म, कर्त्तव्य- पालन और समत्वभाव—मानव जीवन को सन्तुलित, अनुशासित और उद्देश्यपूर्ण बनाता है। इसी कर्म- दर्शन की व्यावहारिक एवं जीवन- स्पर्शी व्याख्या हमें शिव नारायण सिंह के शिक्षण और व्यक्तित्व में दिखाई देती है। उनके विचारों में वही स्पष्टता, दृढ़ता और जीवन-समीपता है जो गीता के कर्मयोग में दिखाई देती है। उन्होंने अपनी शिक्षण-पद्धति और कथाओं में कर्मवाद को व्यावहारिक रूप देकर यह सिद्ध किया है कि कर्म न केवल आध्यात्मिक आदर्श है, बल्कि मनुष्य के दैनिक जीवन का वास्तविक आधार भी है।

गीता में लिखित श्लोक -

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥

अर्थः तुम्हारा अधिकार केवल कर्म करने में है, फल पर नहीं। फल को कारण मत मानो और अकर्म में भी आसक्त मत हो।"3

इसकी सापेक्षता तथा इसका व्याख्यान करते हुए विद्यार्थियों से...' (खण्ड- एक) 'उत्कृष्टता' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि- "प्रिय विद्यार्थियों, किसी गाँव में एक गरीब लोहार था। लोहार का काम आप जानते ही होंगे। वह लोहार हथौड़े बनाने का काम करता था। उस लोहार का बड़ा नाम था, बड़ी प्रसिद्धि थी। दूर-दूर से लोग हथौड़ा खरीदने आया करते थे उसके पास। वह पूरी मेहनत एवं ईमानदारी से अपने काम में लगा रहता था और उसके इसी काम के कारण उसकी प्रसिद्धि थी।

प्रिय विद्यार्थियों, वह हथौड़ा बनाने वाला लोहार अनपढ़ है, बहुत पढ़ा-लिखा नहीं है, उसे देश-दुनिया की बहुत जानकारी भी नहीं है लेकिन उसके अन्दर ऐसा क्या है ? आप समझ सकते हैं। उसके अन्दर अपने कार्य के प्रति समर्पण हैं | जो भी कार्य वह कर रहा है, जो भी हथौड़ा वह बनाता है उस एक-एक हथौड़े पर वह अपनी सारी शक्ति लगा देता है, अपनी सारी योग्यता लगा देता है, अपनी सारी बुद्धि लगा देता है। प्रत्येक हथौड़े को अपना प्रतीक हथौड़ा समझकर काम करता है, अपना मानदण्ड समझकर बनाता है। क्या आप ऐसा कर सकते हैं ? क्या आप ऐसा कर पाते हैं ?"4

इसी प्रकार विद्यार्थियों से...' (खण्ड- पाँच) 'यत्न

देवो भव' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि- "जेल में बन्द होने पर वहाँ की व्यवस्था के अनुरूप कार्य करना होता है। आपको शायद नहीं मालूम होगा कि जेल में खाने-पीने के बदले काम करना जरूरी है, या फिर पैसा जमा करना होता है। बहुत नामिनल पैसा होता है, टोकन मनी होती है। अगर आप जमा कर दें तो आपको काम नहीं करना होगा, अन्यथा काम करना होगा। एक व्यक्ति उनमें ऐसा था जो दिन-रात काम में लगा रहता। अगर काम नहीं होता तो कैदियों को पढ़ाने लगता। उसके बाद कुछ समय मिलता तो स्वयं पढ़ने लगता , कभी फूल-पौधों की देखभाल करने लगता, तो कभी सफाई का काम करने लगता।

प्रिय विद्यार्थियों, आपके सामने भी अवसर है। आपको भी कर्म का पुजारी होना चाहिए। जिस दिन आप कर्मयोग को साध लेंगे, जिस दिन आप लग जाएँगे, जब आप लगे रह जाएँगे एक तरह से कहा जाय कि जो भी आपका उददेश्य है, जो भी आप कर रहें हैं उसमे पूरी तन्मयता से लगें आपके सामने लक्ष्य है. लग जाएँगे, जूझने लगेंगे तो निश्चित रूप से आपको भी दुनिया जानेगी और आप अपने लक्ष्य पर होंगे।

कोई काम छोटा-बड़ा नहीं होता। मैंने पहले भी आपको बताया है, आज फिर बता रहा हूँ, जो भी काम इस समय आपके पास है परे लगन से, पूरी निष्ठा से, पूरे मनोयोग से आप उसमें भिड़ जाते हैं, तो निश्चित रूप से आपको आपका लक्ष्य मिलना ही है।

गाँधीजी की सफलता का यही रहस्य था कि वे कर्मयोगी हो गये। आप भी कर्मयोगी बनिए, आप भी उस ऊँचाई तक पहुँच जाएँगे जहाँ तक आप पहुँचना चाहते हैं और ऐसा ही होता है। जो भी कर्मयोगी हो जाता है, जो भी एकनिष्ठ हो जाता है अपने उद्देश्य के प्रति, निश्चित रूप से उसे लक्ष्य मिलता ही है। आप इस दिशा में सोचेंगे, विचारेंगे और लगेंगे। आप इस दिशा में लगे हैं, लगे रहेंगे, आप सफल हो रहे हैं , आप सफल होते रहेंगे, आप सफल हो।"5

इस सन्दर्भ में भगवद्गीता का ही एक अन्य श्लोक भी उल्लेख्य है,

"योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ॥

अर्थः आसक्ति छोड़कर सम्भाव से कर्म करो सफलता असफलता को समान मानें।"6

इसका व्याख्यान करते हुए विद्यार्थियों से...' (खण्ड- दो) 'आदत' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि- " प्रिय विद्यार्थियों, भगवान ने कहा- इसके सच्चे अधिकारी तुम्हीं हो क्योंकि तुमने अपने कार्य को नियमित रूप से किया है। उसे कठिन से कठिन परिस्थिति यहाँ तक कहा जा सकता है जान पर खेलकर भी पूरा किया अर्थात् अपनी रुटीन में तुम्हारा इतना विश्वास है कि तुमने आगा-पीछा भी नहीं सोचा और उसे पूरा किया तो यह स्वतः तय है कि वरदान तुम्हें ही मिलना चाहिए, यही सृष्टि का विधान भी है। मैं भी इन्हीं नियमों से बँधा हुआ हूँ। जहाँ कार्य होगा वहीं परिणाम होगा। तुमने कार्य किया तो परिणाम तुम्हारे पक्ष में है और उसे मुझे तुम्हें देना-ही-देना है।

जो भी अपने कर्म को पूरी निष्ठा से करता है, भय त्यागकर करता है, पूरी ईमानदारी से करता है निश्चित रूप से भगवान उस पर प्रसन्न होते हैं। भगवान उसी से प्रसन्न होंगे जो अपने रुटीन को नित्य प्रति पूरा करेगा, हर स्थिति में पूरा करेगा। क्या आप पूरा करते हैं, जरा इस पर विचार कीजिए। यह कोई सामान्य प्रश्न नहीं है। यदि इस प्रश्न का उत्तर आप सही-सही दे पाते हैं तो फिर कोई कारण नहीं बचता कि आप अपने जीवन लक्ष्य के चरम पर न पहुँच जायें।"7

इसी सन्दर्भ में विद्यार्थियों से...' (खण्ड- दो) 'श्रमशील' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं - "प्रिय विद्यार्थियों, एक सुन्दर बागीचा। उस बागीचे में एक मधुमक्खी और एक तितली थोड़ी ही दूरी पर रहा करती थीं। थोड़े ही फासले पर रहती थीं वे दोनों। नित्य प्रति की एक ही बात थी। सुबह से ही मधुमक्खी अपने काम में लग जाया करती थी, तितली भी उसके आस-पास ही अपनी दिनचर्या पूरी करती।

शायद आपने इसे महसूस किया हो, न भी किया हो; तितली और मधुमक्खी दोनों के साथ परिवेश एक ही है, परिस्थितियाँ एक ही है। जैसी परिस्थितियाँ और परिवेश मधुमक्खी को मिली हैं, ठीक वही परिस्थितियाँ और परिवेश तितली को भी मिली हैं,

लेकिन दोनों के जीवनयापन में, दोनों के क्रियाकलाप में और दोनों की उपलब्धियों में जमीन-आसमान का अन्तर है।

आखिर ऐसा क्यों है ? इसके पीछे कहीं-न-कहीं मधुमक्खी का अपना दृष्टिकोण है और तितली का अपना। मधुमक्खी श्रमशील है, श्रम में उसका विश्वास है, हर क्षण वह मेहनत करती है और तितली पलायनवादी है, उसे श्रम का ज्ञान नहीं है, न ही कोई भान है, उसे अपने भविष्य की भी कोई चिन्ता नहीं है और न ही वह उस बारे में सोच पा रही है।

आप जितने लोग यहाँ आते हैं, सभी को परिस्थितियाँ एक जैसी ही मिलती हैं; कहीं किसी के साथ कोई पार्शिऑलिटी होती है क्या ? ऐसा तो नहीं है कि जो पढ़ने में अच्छा है उसे ज्यादा पढ़ाया जाता है और जो अच्छा नहीं है, उसे कम पढ़ाया जाता है। जब सभी के साथ एक ही तरह की परिस्थितियाँ हैं, एक ही स्थिति है, सब कुछ एक ही जैसा है फिर रिजल्ट आने पर अन्तर क्यों हो जाता है; कभी सोचा आपने? नहीं सोचा तो अब सोच लीजिए, आज ही सोच लीजिए, जरूर सोच लीजिए।"8

भगवद्गीता का एक अन्य श्लोक -

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः अकर्मणश्च बोद्धव्यं....

अर्थः क्या कर्म है, क्या विकर्म (अनुचित कार्य), और क्या अकर्म (अकर्त्तापन) – इसका विवेक आवश्यक है।"9

इस सन्दर्भ में विद्यार्थियों से...' (खण्ड- सात) 'स्वराज' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि- "भगवान शिव ने मेढ़कों को समझाया- तुम्हारी क्या जरूरत है, तुम्हें क्या चाहिए, तुम्हारे लिए क्या उपयोगी है, यह तुमसे अच्छी तरह न तो कोई जान सकता है, न ही कोई बता सकता है। न तो कोई महसूस कर सकता है और न ही कोई समझ सकता है। इसलिए यही अच्छा है कि तुम्हें अपनी जरूरत, आवश्यकता के अनुकूल, अनुरूप मार्ग चाहिए और यह तभी सम्भव है जब तुम स्वयं अपना स्वाभिमान जागृत करोगे और अपने द्वारा की गई गलतियों का ध्यान रखकर उनसे कुछ सीख लेकर, उन्हें सुधारकर आगे बढ़ोगे। निश्चित ही, तुम सफल होगे, सुखी होगे, क्योंकि यही प्रकृति का शाश्वत नियम है। प्रकृति और प्रवृत्ति का सामंजस्य ही आगे का मार्ग प्रशस्त करता है।

प्रिय विद्यार्थियों करना क्या है? कर्म। कर्म क्या है ? प्रधान तत्व है इस जीवन का। 'कर्म प्रधान विश्व रचि राखा' कर्म की ही प्रधानता से सृष्टि का निर्माण है। कर्म की प्रधानता से ही आज हम हैं और कर्म की प्रधानता से ही हमें अपने जीवन का लक्ष्य मिलेगा।"10

गीता का ही एक अन्य महत्त्वपूर्ण श्लोक-

"योगः कर्मसु कौशलम्"

अर्थः योग का अर्थ केवल ध्यान नहीं- कर्म को कुशलता, समता और जागरूकता से करना भी योग है।"11

इस सन्दर्भ में विद्यार्थियों से...' (खण्ड- आठ) 'कर्म की निरन्तरता' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि-"विज्ञान भी यही कहता है कि आपके कर्म ही, कर्म को क्या कहेंगे ? कार्य ही कहेंगे न। वर्कडन वही न है जो आप करते हैं और वर्कडन क्या है ? यही वर्कडन एनर्जी में कनवर्ट होता है। एनर्जी कभी नष्ट नहीं होती है। आपके सुकर्म हों या दुष्कर्म हों वह सारे-के-सारे क्या हैं वह ऊर्जा में कनवर्ट हैं। जैसे उन्हें अवसर मिलेगा उनका एक्सपोजर होगा। आदत क्या है ? कभी का आपका कर्म है अब नहीं छूट रहा है।

अब आपकी बात है तो आप बतायें आपके साथ ऐसी कौन-सी कोशिश बाकी है, जो नहीं हो रही है। प्रत्येक कार्नर से, प्रत्येक दृष्टिकोण से, आपको सचेत करना, आपको समझाना, आपका मार्ग प्रशस्त करना और श्रेष्ठ-से-श्रेष्ठतम् की ओर आपको उन्मुख करना। यहाँ इस वातावरण का, प्रतिक्षण का यही कार्य है। इसका प्रभाव शत-प्रतिशत सामने है तभी तो आप इस ऊँचाई पर हैं और आपकी इस ऊँचाई को देखकर हर कोई कह उठता है वाह ये तो प्रेस्टिज के विद्यार्थी हैं। यह आपका सौभाग्य है।

भगवद्गीता का दार्शनिक कर्मवाद और शिव नारायण सिंह का शिक्षण आधारित कर्मवाद दोनों एक ही धारा के दो प्रवाह हैं। एक ओर गीता व्यक्ति को आध्यात्मिक जागृति प्रदान करती है, तो दूसरी ओर शिव नारायण सिंह उसी कर्म सिद्धान्त को जीवन में

उतारने की प्रेरणा देते हैं। दोनों के विचार इस सत्य पर एकमत हैं। गीता का कर्मयोग मनुष्य को भीतर से जागृत करता है, उसे समत्व, निःस्वार्थता और कर्त्तव्य निष्ठा का मार्ग दिखाता है। वहीं शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ इसी सिद्धान्त को व्यावहारिक जीवन में लागू करने का मार्ग बताती हैं— अनुशासन, श्रम, जिम्मेदारी और नैतिकता के रूप में। दोनों का सार यही है कि- "कर्म ही मनुष्य का निर्माण करता है उसका वर्तमान भी और उसका भविष्य भी।"

योगदर्शन का कर्मवाद और शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ: कर्त्तव्य, अनुशासन और आत्मसाधना का समन्वय –

योगदर्शन में कर्मवाद मनुष्य को यह बोध कराता है कि कर्म ही आत्मोन्नति का सेतु है। पतंजलि के अनुसार निष्काम, संयमित और सद्गुणों से युक्त कर्म मन को शुद्ध करते हैं और चित्तवृत्तियों के निवारण में सहायक होते हैं। इसी प्रकार शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ भी कर्म के महत्त्व पर आधारित हैं जहाँ वे अपने विद्यार्थियों को यह समझाते हैं कि व्यक्ति का विकास उसके दैनिक आचरण, कर्त्तव्य निष्ठा और आत्मानुशासन पर निर्भर करता है। उनकी कथाओं में कर्म मात्र बाह्य क्रिया नहीं बल्कि चरित्र-निर्माण, युक्त आचरण और जीवन- साधना का माध्यम बनकर उभरता है।

योगदर्शन का दार्शनिक कर्मवाद और शिव नारायण सिंह की शिक्षाप्रद कथाएँ दोनों यह सन्देश देती हैं कि मनुष्य अपने प्रयासों से ही अपनी दिशा बनाता है। कर्म के प्रति जागरूकता, निरन्तरता और निष्ठा यही वह कड़ी है जो आध्यात्मिक साधना और व्यावहारिक जीवन दोनों को एकसूत्र में पिरोती है। इस प्रकार दोनों परम्पराएँ मनुष्य को यह सीख देती हैं कि कर्म ही सर्वोच्च साधना है, और यही जीवन को सार्थकता प्रदान करता है।

योगसूत्र -

"प्रवृत्तिभेदे प्रयोजकं चित्तम्।"

अर्थः प्रत्येक कर्म का प्रेरक चित्त होता है, और चित्त संस्कारों से प्रभावित है।13

इसकी सापेक्षता को सिद्ध करते हुए विद्यार्थियों से...' (खण्ड- दस) सायास बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि "प्रिय विद्यार्थियों कोई भी बड़ा कार्य इतनी आसानी से नहीं होता है। कोई भी उपलब्धि आसानी से मिलनी सम्भव नहीं है। जो करता है, वही पाता है। अगर हमारा स्वभाव बिना किए पाने का है तो हम कभी नहीं पा सकते। इसलिए हमें अपना स्वभाव इस तरह का बनाना होगा कि हमें करना है और अगर हम कर रहे हैं तो निश्चित ही हम पाएँगे और पाने की बात है तो आपको परिणाम मिल ही गया है।"14

इसी प्रकार विद्यार्थियों से...' (खण्ड- छ) 'तन्द्रा' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि "प्रिय विद्यार्थियों जब तक आप अपने ही अन्तःकरण से संचालित नहीं होंगे, केवल लकीर पीटते रहेंगे और दूसरे के बताए रास्ते पर चलते रहेंगे, तो आप कहाँ पहुँचेंगे यह पहले से तय है, यह सभी को पता है, सभी जानते हैं। लेकिन पहुँचना कहाँ है ? यह आप जानते हैं, जान ही रहे हैं, जान ही जाएँगे।

जब आपकी तन्द्रा टूटेगी, क्योंकि अभी आप होश में नहीं हैं। जैसे वह आया था चढ़ाने और स्वयं चढ़ गया। अगर वह होश में होता तो स्वयं चढ़ता क्या ? कत्तई नहीं। जब आपकी तन्द्रा टूटेगी, जब आप जागेंगे, जब आप अपने अन्दर झाकेंगे तो पाएँगे कि आपमें वह सब शक्तियाँ भरी पड़ी हैं और इसी इन्तजार में हैं कि कब आप द्वार खोल रहे हैं।" 15

योगसूत्र

"तपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः।"

अर्थः तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान ये तीन कर्म ही क्रियायोग हैं, जो मन को शुद्ध करते हैं।"16

इसकी सापेक्षता को सिद्ध करते हुए विद्यार्थियों से...' (खण्ड- चार) 'आवां' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि "प्रिय विद्यार्थियों , बात मेरी समझ में कुछ इस तरह आती है कि जिन बर्तनों से टनटनाहट की आवाज नहीं आ रही है, वे टूट गये हैं, बेकार हो गये हैं, लेकिन वे बर्तन जो अभी पकाये नहीं गये हैं, जिन्हें अभी आवाँ पर चढ़ाया नहीं गया है, जो अभी कच्चे हैं, उनके साथ ऐसी कोई बात नहीं है। उन्हें तो वह फिर गूँथकर, चाक पर चढ़ाकर बर्तन बना सकता है। कितनी बड़ी बात कही उसने ! जो कच्चे हैं, उन्हें वह छोड़ता नहीं है। वे उसके

काम के हैं।

आप समझ रहे हैं न, जब तक वे कच्चे रहेंगे, तब तक वह उन्हें छोड़ेगा नहीं। कितनी बार भी सांड़ रौंद जाए, कितनी बार भी वे टूट जायें, लेकिन वह उन्हें तब तक नहीं छोड़ेगा, जब तक कि वे पक करके टन-टन की आवाज न करें या तो फूट जायें, तो फेंक देगा। टन टन की आवाज करेगा, तो बेच देगा।

बात समझ में आ रही है ? जब तक कच्चे हैं, तब तक कुम्हार छोड़ने वाला नहीं है। आप अपने बारे में क्या सोचते हैं ? आपको छोड़ दिया जाए, आप भी पकेंगे, आवाँ पर चढ़ने के लिए तैयार हैं ? और क्या उसके बाद टन-टन की आवाज आएगी आपसे? हम जहाँ जीते हैं न, वहीं हम सीखते हैं, या हम जो जीते हैं वही हम बन जाते हैं।

प्रिय विद्यार्थियों, अभी ढेर सारी सम्भावनाएँ आपके साथ हैं। लक्ष्य निर्धारित कीजिए आप जैसा चाहिए बन जाइए। लेकिन जब आपका यह कच्चा होना, कच्ची उम्र जो अभी चल रही है आपकी, अगर आप इससे बाहर निकल जायेंगे, तब फिर आप कुछ नहीं बन पायेंगे। वह समय बहुत करीब है जब आपको आवाँ पर चढ़ाया जाएगा, उस समय केवल दो स्थितियाँ होंगी या तो मैंने अभी बताया आपको, पक करके वही टन-टन की आवाज आपसे भी निकलेगी, तब तो आपको सुरक्षित रखा जाएगा नहीं तो फिर फेंक दिया जाएगा।

आप स्वयं फेंकाने के लिए तैयार रहें या फिर वह स्थान पाने के लिए, जिसके लिए आप लगे हुए हैं। यह तय करना आपको है, तय कर लीजिए। कोशिश करें, लगिए, निश्चित रूप से आपको आपका लक्ष्य मिलेगा।

यही वह वक्त है, यही वह अवस्था है, यही वह उम्र है, यही वह समय है, यही वह क्षण है, जब आप अपना लक्ष्य निर्धारित करके वह सब बन सकते हैं।"17

योगदर्शन का कर्मवाद और शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ दोनों ही भारतीय चिंतन की महान धरोहर हैं, जो मनुष्य को अपने कर्म के प्रति सजग बनाती हैं। योगदर्शन जहाँ सांसारिक और आध्यात्मिक जीवन के समन्वय में कर्म को अनिवार्य मानता है, वहीं शिव नारायण सिंह की कथाएँ दैनिक जीवन में कर्म, अनुशासन और कर्त्तव्यनिष्ठा को व्यावहारिक रूप से स्थापित करती हैं। दोनों ही मान्यताओं में यह सार्वभौमिक सत्य निहित है कि कर्म ही मनुष्य का वास्तविक परिचय और उसकी उन्नति का साधन है। इस प्रकार, योगदर्शन का दार्शनिक कर्मवाद और शिव नारायण सिंह की व्यावहारिक बोधकथाएँ मिलकर यह सन्देश देती हैं कि जीवन में सफलता, शान्ति और साधना तीनों का मूल एक ही है: सजग, संयमित, निष्ठापूर्ण कर्म।

कर्म की महत्ता कबीर के दोहों और शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में समान जीवनदर्शन – भारतीय चिंतन परम्परा में कर्म को सदैव जीवन का केन्द्र-बिन्दु माना गया है। कबीर के दोहे हों या शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ दोनों ही मनुष्य के जीवन में कर्म की अनिवार्यता, निष्ठा और जिम्मेदारी का सन्देश देते हैं। कबीर अपने सहज और मार्मिक दोहों के माध्यम से बताते हैं कि कर्म ही मनुष्य की पहचान है; केवल वचन या बाहरी आडम्बर से नहीं, बल्कि सत्कर्मों से ही जीवन सफल होता है। इसी प्रकार शिव नारायण सिंह अपनी शिक्षाप्रद कथाओं में यह स्पष्ट करते हैं कि मेहनत, कर्त्तव्य-पालन और अनुशासन ही मनुष्य को उन्नति और सम्मान की ओर ले जाते हैं।

दोनों की शिक्षाओं में यह समानता चमकती है कि कर्म ही सच्ची साधना है जो मनुष्य के चरित्र, भाग्य और भविष्य का निर्माण करती है। इस प्रकार कबीर के दोहे और शिव नारायण सिंह की कथाएँ कर्मवाद को आध्यात्मिक तथा व्यावहारिक दोनों आयामों में प्रस्तुत करती हैं, और मनुष्य को कर्मनिष्ठ होने की प्रेरणा देती हैं।

दोहाः

"बिनु करमा जो पावई, सो कहु किसको देइ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, करम बिना सब दै।।"

भावार्थ – कर्म किए बिना कोई फल नहीं मिलता भाग्य को दोष देना व्यर्थ है।"18

इसकी सापेक्षता को सिद्ध करते हुए विद्यार्थियों से...' (खण्ड- दस) 'लगनशीलता' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं "प्रिय विद्यार्थियों , कर्म प्रधान विश्व रचि राखा। इस दुनिया में, इस संसार में कर्म की ही प्रधानता है। कर्म का सिद्ध

होना ही सर्वसिद्धि का विधान है। तुम आश्रम में रह रहे हो और इस आश्रम का एक ही उद्देश्य है, इस आश्रम में किसी के आने का एक ही कारण है कि यहाँ कर्म की शिक्षा दी जाती है, यहाँ कर्म का महत्त्व बताया जाता है। यहाँ कर्म से ज्ञान प्राप्ति की ओर मार्ग जाता है समय के साथ तुम्हारा भी कर्म जागृत हो जाएगा और वह सब तुम्हें मिल जाएगा, जिसकी पात्रता तुम अपने अन्दर सिद्ध कर सकोगे, सिद्ध कर लोगे।"19

दोहाः

"करम करै सो फल पावै, और करै सो खाय।
करम बिना कोऊ नाहीं, कबीर कहै सुनाय।।"

भावार्थ – मनुष्य जो कर्म करता है, वही उसे फल देता है। परजीवी जीवन से बचने की शिक्षा।"20

इसी सन्दर्भ में विद्यार्थियों से...' (खण्ड- तीन) 'अंतः प्रेरणा' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि "प्रिय विद्यार्थियों ,जैसे बहती हुई नदी, चट्टान के सामने आने पर न तो बहना छोड़ देती है और न ही चट्टान से मनमुटाव कर बैठती है, न तो झगड़ा कर बैठती है, न ही उलाहना देती है। हाँ, वह थोड़ा-सा किनारा कर लेती है और अपने गन्तव्य पर पहुँचकर ही रुकती है, उससे पहले कभी कहीं रुकती ही नहीं। वैसे ही हमारा आपका जीवनक्रम है, इसमें सुख-दुःख, सम-विषम परिस्थितियाँ, अच्छे और बुरे दिन आगे- पीछे चलते रहते हैं। जरूरत है इन कठिनाइयों को, इन परेशानियों को, इन कमजोरियों को, इन दिक्कतों को सह लेने की, बर्दाश्त कर लेने की और हर क्षण अपना कदम आगे बढ़ाते रहने की। यह ध्रुव सत्य है।

प्रिय विद्यार्थियों, आपका यह समय कुछ इसी तरह का है, इन दिनों आपको बहुत कठिनाइयाँ होती हैं, बहुत पेशेंस रखना पड़ता है, बड़ी मेहनत करनी पड़ती है। लेकिन यही मेहनत जब रंग लाती है तब बात आपकी समझ में आती है। अगर आपने मेहनत से कुछ एचीव किया है तो उसका अपना अलग ही सुख है, उसका अलग ही आनन्द है।"21

इसी प्रकार एक अन्य कथा विद्यार्थियों से...' (खण्ड- पाँच) में 'कर्त्तव्यपरायण' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि "प्रिय विद्यार्थियों, अगर आप एक बार में सफल नहीं होते हैं, तो पुनः कोशिश कीजिए एक बार और कोशिश कीजिए, एक बार और कोशिश करके देखिए। निश्चित ही आप परिणाम के करीब पहुँच रहे होंगे। लेकिन ऐसा आपको एहसास नहीं होता है। जिन्हें इस बात का एहसास है कि अगर हम कोशिश करते हैं, लगे रहते हैं, तो निश्चित रूप में कल परिणाम हमारे पक्ष में होगा तो वे निश्चित ही सफल होते हैं।"22

कबीर के दोहे और शिव नारायण सिंह की कथाएँ दोनों यह स्थापित करती हैं कि कर्म ही मनुष्य के जीवन की धुरी है। कबीर का कर्मवाद आध्यात्मिक और सामाजिक दोनों स्तरों पर मनुष्य को सक्रिय करता है, वहीं शिव नारायण सिंह का कर्मवाद व्यावहारिक, शिक्षणात्मक और चरित्र-निर्माण का मार्ग प्रशस्त करता है।

निष्कर्ष– इन सभी ग्रंथों का तुलनात्मक विश्लेषण यह सिद्ध करता है कि कर्मवाद केवल दार्शनिक सिद्धान्त नहीं, बल्कि जीवन- व्यवहार का आधार, नैतिक अनुशासन की नींव, और आत्मिक जागृति का मार्ग है। भारतीय दर्शन में 'कर्म' व्यक्ति को कर्त्तव्यनिष्ठ, जीवनोन्मुख, आत्मसंयमी और समाजोपयोगी बनाने वाला तत्व है। इस शोध से उद्भूत एकीकृत दृष्टिकोण यह बताता है कि चाहे आध्यात्मिक उन्नति का लक्ष्य हो, योग-साधना का शुद्धिकरण, सामाजिक चेतना, या शिक्षकीय जीवन मूल्य कर्म ही वह बिन्दु है जहाँ सभी मार्ग मिलकर एक साझा भारतीय चिंतन दृष्टि का निर्माण करते हैं। इस शोध से यह स्पष्ट होता है कि कर्मवाद भारतीय दार्शनिक परम्परा की सबसे व्यापक, निरन्तर और सर्वमान्य अवधारणा है। यद्यपि भगवद्गीता, योगदर्शन, कबीर और शिव नारायण सिंह की कथाएँ अलग-अलग युगों और सामाजिक सन्दर्भों से आती हैं। तब भी सभी में कर्म की विचारधारा का ही समावेश हुआ है।

शिव नारायण सिंह अपनी सभी बोध कथाओं में अलग अलग ग्रंथों, प्रेरक प्रसंग, श्रेष्ठ तथा महान व्यक्तित्व का उदहारण देते हुए विद्यार्थियों को कर्म के ही उन्नत मार्ग पर चलने को प्रेरित करते हैं, उनकी सभी कथाओं में निरन्तर निष्काम कर्म, आसक्ति निहित होकर, पूर्ण संकल्प से , स्व मनोबल से अतएव

हर सम्भव प्रयास से कर्म करने का सार मिलता हैं । उनकी बोधकथाओं में कर्म और नैतिकता का गहरा सम्बन्ध दिखाई देता है। वे यह सन्देश देते हैं कि केवल कर्म करना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि कर्म का स्वरूप भी महत्त्वपूर्ण है। सत्कर्म ही वास्तविक उन्नति का मार्ग प्रशस्त करते हैं, जबकि दुष्कर्म अंततः पतन का कारण बनते हैं। इस सन्दर्भ में उनकी कथाएँ जीवन के नैतिक मूल्यों को पुनः स्थापित करने का कार्य करती हैं।

सन्दर्भ सूची –

1. चरक, चरक संहिता (सूत्रस्थान), काशीनाथ शास्त्री एवं गोरखनाथ चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित, वाराणसी चौखम्भा भारती अकादमी; 2023, पृष्ठ संख्या- 12
2. चरक, चरक संहिता (सूत्रस्थान), काशीनाथशास्त्री एवं गोरखनाथ चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित, वाराणसी चौखम्भा भारती अकादमी; 2023, पृष्ठ संख्या- 13
3. वेदव्यास श्रीमद्भगवद्गीता,सम्पादक. जयदयाल गोयन्दका, गोरखपुर गीता प्रेस; नवीनतम संस्करण. पृष्ठ संख्या- 42
4. शिव नारायण सिंह 'विद्यार्थियों से...' खण्ड 01, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या-15
5. शिव नारायण सिंह 'विद्यार्थियों से...' खण्ड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या-162
6. वेदव्यास, श्रीमद्भगवद्गीता, सम्पादक जयदयाल गोयन्दका, गोरखपुर गीता प्रेस; नवीनतम संस्करण. पृष्ठ संख्या- 42–43
7. शिव नारायण सिंह 'विद्यार्थियों से...' खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या-55
8. शिव नारायण सिंह 'विद्यार्थियों से...' खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या-33
9. वेदव्यास, श्रीमद्भगवद्गीता, सम्पादक जयदयाल गोयन्दका, गोरखपुर गीता प्रेस; नवीनतम संस्करण. पृष्ठ संख्या- 122
10. शिव नारायण सिंह 'विद्यार्थियों से...' खण्ड 07, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या-373
11. वेदव्यास, श्रीमद्भगवद्गीता, सम्पादक जयदयाल गोयनका, गोरखपुर गीता प्रेस; नवीनतम संस्करण. पृष्ठ संख्या- 44
12. शिव नारायण सिंह 'विद्यार्थियों से... संचयन', प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या-410
13. पतञ्जलि, योगदर्शन (योगसूत्र), सम्पादक हनुमान प्रसाद पोद्दार एवं जयनारायण विद्यालंकार, गोरखपुर गीता प्रेस; नवीनतम संस्करण, पृष्ठ संख्या-66
14. शिव नारायण सिंह 'विद्यार्थियों से...' खण्ड 10, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या-640
15. शिव नारायण सिंह 'विद्यार्थियों से...' खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या-220
16. पतंजलि, योगदर्शन (योगसूत्र), सम्पादक हनुमान प्रसाद पोद्दार एवं जयनारायण विद्यालंकार, गोरखपुर गीता प्रेस; नवीनतम संस्करण, पृष्ठ संख्या-37
17. शिव नारायण सिंह 'विद्यार्थियों से...' खण्ड 4, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या-19
18. कबीर, साखी संग्रह, सम्पादकः सन्त विवेकदास आचार्य, पटना रुपेश ठाकुर प्रसाद प्रकाशन; 2022, 10वाँ संस्करण, पृष्ठ संख्या – 289
19. शिव नारायण सिंह 'विद्यार्थियों से... संचयन', प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या-551
20. कबीर, साखी संग्रह, सम्पादक सन्त विवेकदास आचार्य, पटनाः रुपेश ठाकुर प्रसाद प्रकाशन; 2022, 10वाँ संस्करण, पृष्ठ संख्या – 409
21. शिव नारायण सिंह 'विद्यार्थियों से...' खण्ड 03, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या-86
22. शिव नारायण सिंह 'विद्यार्थियों से...' खण्ड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या-184

जीवन–संघर्ष का विजय सोपान : शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ

अजीत कुमार कुशवाहा
शोधार्थी
बोधकथा शोध संस्थान
शिवलोक, गोरखपुर उ. प्र.

प्रस्तावना – शिव नारायण सिंह की साहित्यिक साधना लोककथा परम्परा, मानवीय मूल्यों की सम्वेदना, जीवन–संघर्ष और नैतिकता से अभिन्न रूप में जुड़ी हुई है। हमारे भारतवर्ष में अत्यन्त प्राचीन काल से ही कथाओं, लोकगाथाओं, दृष्टान्तों और बोधकथाओं के माध्यम से ज्ञान, नैतिकता, व्यावहारिकता और जीवन-संघर्षों का सम्प्रेषण होता रहा है। बोधकथा परम्परा समाज की सामूहिक स्मृति, सांस्कृतिक निरन्तरता और जीवन-संघर्षों की आधारशिला रही है।

प्रस्तुत शोध आलेख 'जीवन–संघर्ष का विजय सोपान शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ' में यह विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार से उनकी बोधकथाओं में जीवन–संघर्ष का विजय सोपान की जीवन्तता और नैतिकता की गूँज पुनः स्थापित हुई है। शोध के द्वारा यह स्पष्ट करना है कि शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ किस प्रकार व्यावहारिक भाषा, सहज व स्वाभाविक शैली और कथोपकथन के माध्यम से प्राचीन भारतीय कथा परम्परा को पुनर्स्थापित करती हैं।

संसार में किसी भी देश में उसकी सामाजिक, ऐतिहासिक घटनाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। उन्हीं घटनाओं को लेकर सभ्यता और संस्कृति निर्मित होती है। परन्तु इन घटनाओं से पृथक हटकर कथाओं की भी कम महत्त्वपूर्ण भूमिका नहीं होती। ये कथाएँ भी समाज को एक निश्चित दिशा प्रदान करती हैं। जिससे समाज नई दिशा व ऊर्जा के साथ आगे बढ़ता है। शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ बच्चों के सर्वांगीण विकास का सोपान बनती जा रही है। ये बोधकथाएँ बच्चों में अपनी जिम्मेदारी की समझ विकसित करती हैं, जीवन में आने वाली कठिनाइयों को कैसे हल किया जाये इसकी प्रेरणा देती हैं। इसके साथ-ही-साथ जीवन में संघर्ष की अनूठी पहल को भी विश्लेषित करती हैं।

बीज–शब्द – जीवन–संघर्ष, मानवीय मूल्य, लोक कथाएँ, सभ्यता व संस्कृति, विजय सोपान, निरन्तरता, पंत्रतन्त्र।

शोध आलेख – भारतीय कथा परम्परा में बोधकथाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। विष्णु शर्मा के पंचतन्त्र, हितोपदेश, जातक कथाओं से लेकर आधुनिक काल तक बोधकथाएँ मानव समाज को दिशा देकर सही मार्ग की ओर ले जाने का कार्य करती रही हैं। तत्कालीन समाज अनेक प्रकार की विषमताओं, विडम्बनाओं एवं विकृतियों से इतने बुरे तरीके से घिर गया है कि अपनी सभ्यता, संस्कृति, परम्पराओं के साथ-साथ भावी पीढ़ियों को बचाने का संकट भी उत्पन्न हो गया। ऐसे दौर में शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ इन जटिलताओं को दूरकर समाज को एक नई दिशा प्रदान करती हैं जिससे अंधकार में भटके हुए लोग रोशनी पाकर अपने जीवन को आदर्श रूप में ढाल सकें।

बोधकथाएँ बच्चों व पाठकों को सिर्फ जीवन का अर्थ ही नहीं बताती हैं, बल्कि जीवन जीने की कला व रहस्यों को भी बताती हैं। इनके द्वारा जो शिक्षा मिलती है उससे बच्चों का शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति के साथ ही सर्वांगीण विकास भी होता है। इनसे मिलने वाली शिक्षा का प्रभाव जीवन पर्यन्त रहता है जिससे हम अपने जीवन को निरन्तर सँवारते रहते हैं। बोधकथाएँ ही जीवन–संघर्ष का पाठ पढ़ाती हैं जिससे व्यक्ति जीवन में सफलताएँ प्राप्त कर अपना जीवन सार्थक मानता है।

आज का विद्यार्थी कल का नागरिक है और पूरे देश दुनिया का भार उसके ऊपर आ सकता है। इसलिए आज का विद्यार्थी जितना प्रबुद्ध, कुशल, सक्षम और प्रतिभा सम्पन्न होगा, देश का भविष्य भी उतना ही उज्ज्वल होगा। इस दृष्टि से विद्यार्थियों के कन्धों पर अनेक दायित्व आ जाते हैं, जिनका निर्वाह करते हुए वे राष्ट्र निर्माण की दिशा में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान कर सकते हैं। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए शिव नारायण सिंह ने अपनी बोधकथाओं को

बच्चों के लिए अत्यन्त ग्राह्य बना दिये हैं जिससे छात्र जीवन चर्या में संघर्ष करते हुए सफलता प्राप्त कर सकें।

'विद्यार्थियों से...' (खण्ड एक) 'अहंकार' बोधकथा में एक राजा की कथा है जिसकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैली हुई है। एक दिन एक तपस्वी राजा के महल में पहुँचता है। राजा अपने को धन्य समझते हैं वे तपस्वी को अपना सब कुछ देकर शिष्य हो जाना चाहते हैं। परन्तु तपस्वी कहते हैं 'यह सब आपका नहीं' है। राजा अपना शरीर दे देना चाहते हैं तब तपस्वी उन्हें समझाते हैं कि आप अवश्य ही पूर्ण होंगे बस आप अपने अहंकार को दमन कर दीजिए।

इस कथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि - "प्रिय विद्यार्थियों, आप इस दुनिया में इसीलिए आये हैं कि आप यहाँ से पूर्ण होकर जायें। अगर आप प्रयास करते हैं, अगर आप कोशिश करते हैं, अगर आप अहंकार को अपने अन्दर से बाहर कर देंगे, जिस दिन आपने अहंकार पर विजय प्राप्त कर ली, समझिए उस दिन आप पूर्ण हो गये।"1

आधुनिक युग विज्ञान का युग है। जिस देश का विकास जितनी शीघ्रता से होगा, वह राष्ट्र उतना ही महान होगा। अतः विद्यार्थियों के लिए यह अति आवश्यक है कि वे नवीनतम अनुसन्धानों के द्वार खोलें। चिकित्सा के क्षेत्र में अध्ययनरत विद्यार्थी औषध और सर्जरी के क्षेत्र में नवीन अनुसंधान कर सकते हैं। वे मानव-जीवन को अधिक सुरक्षित स्वस्थ बनाने का प्रयास कर सकते हैं। इसी प्रकार इंजीनियरिंग में अध्ययनरत विद्यार्थी विविध प्रकार के कल-कारखानों और पुलों आदि के विकास में भी अपना योगदान दे सकते हैं। इसे ही ध्यान में रखकर शिव नारायण सिंह जी बच्चों को प्रेरित करते हैं।

'विद्यार्थियों से...' खण्ड- एक' भटकाव' बोधकथा के माध्यम से वे कहते हैं कि- "अगर आप कुछ करना चाहते हैं तो आपको डटना होगा, आपको लगना होगा, आपको उलझना होगा परिस्थितियों से। परिस्थितियाँ तो आती-जाती रहती हैं। कभी किसी के साथ ऐसा नहीं हुआ कि सारी परिस्थितियाँ उसके अनुरूप हो जायें और वह टॉप कर जाये। ऐसा नहीं होता कि टॉप करने वाले विद्यार्थियों की परिस्थितियाँ पूर्ण रूप से अनुकूल होती हों। उनके साथ परिस्थितियाँ और भी प्रतिकूल होती हैं। वे उन परिस्थितियों के खिलाफ जद्दोजहद करके ऊँचाई तक पहुँचते हैं, इतनी आसानी से नहीं पहुँच जाते हैं।" 2

शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ परिपक्व ज्ञान से पूर्ण प्रतीत होती हैं। जीवन के लिए परिपक्व ज्ञान परम आवश्यक है। अधकचरे ज्ञान से गम्भीरता नहीं आ सकती उससे भटकाव की स्थिति पैदा हो जाती है। इसीलिए यह आवश्यक है कि विद्यार्थी अपने ज्ञान को परिपक्व बनायें तथा परिवार के सदस्यों व सम्पूर्ण समाज को ज्ञान- सम्पन्न बनने, देश की सांस्कृतिक सम्पदा का विकास करने आदि विभिन्न क्षेत्रों में अपने इस परिपक्व ज्ञान का सदुपयोग कर समाज को एक नई दिशा प्रदान करें। इस कार्य को शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ करने में पूर्णरूपेण सक्षम हैं।

'विद्यार्थियों से...' खण्ड दो 'संकल्प' बोधकथा में एक किसान की कथा है, जिसे एक पहाड़ को हटाना है क्योंकि पहाड़ के दूसरी ओर किसान का खेत है। पहाड़ के वजह से उसके खेत तक बादल नहीं पहुँचते हैं जिससे उसकी खेती खराब जाती है। अब किसान ने अकेले उसे हटाने का संकल्प लिया, कार्य शुरू किया। बाद में हजारों लोगों ने उसका साथ दिया जिससे उसका संकल्प पूरा हो गया।

इस बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं - "प्रिय विद्यार्थियों, आपने देखा एक छोटा-सा किसान, एक अदना सा किसान जिसका इस पहाड़ के सामने कोई अस्तित्व ही नहीं है, उसने उस पहाड़ को वहाँ से हटा दिया। आखिर इसके पीछे बात क्या है ? इसके पीछे जो बात है वही संकल्प है, वही सत्य है। किसान को पहाड़ से परेशानी थी और उस परेशानी को दूर करने के लिए उसने दृढ़ संकल्प किया।"3

आज का विद्यार्थी समाज में रहकर ही अपनी शिक्षा प्राप्त करता है। पहले की भाँति वह गुरुकुल में जाकर नहीं रहता है। इसलिए उस पर अपने राष्ट्र, परिवार और समाज आदि के प्रति अनेक उत्तरदायित्व आ गये हैं। जो विद्यार्थी अपने इन कर्त्तव्यों का निर्वाह करते हैं वे अवश्य ही कहीं-न-कहीं बोधकथाओं से प्रेरणा प्राप्त किये होंगे। इस प्रकार राष्ट्र निर्माण के लिए कर्त्तव्य-परायणता की भावना का विकास छात्रों में बोधकथाओं के माध्यम से होता रहता है।

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-दो 'जिसने जो चाहा...' नामक बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं - "प्रिय विद्यार्थियों, पुरुषार्थी बनिए, बिना पुरुषार्थी बने कुछ नहीं होता है। सब कुछ पुरुषार्थ में निहित है। जो पुरुषार्थी है उसके लिए सब कुछ सम्भव है। अगर आप पुरुषार्थी बन गये तो आपने जो सोचा है

वही होगा।"4

शिव नारायण सिंह जी अनुशासन के प्रति अति जागरूक और तत्पर रहने वाले प्राचार्य हैं। क्योंकि अनुशासन के बिना कोई भी कार्य सुचारू रूप से सम्पन्न नहीं हो सकता है। राष्ट्र-निर्माण का भी मुख्य आधार ही अनुशासन है। इसीलिए वे इस दायित्व को भली-भाँति पूर्ण करने के लिए प्रतिबद्ध रहते हैं। वे चाहते हैं कि सभी बच्चे अनुशासन में रहते हुए अपने लक्ष्य प्राप्ति का चिन्तन करें। जिस प्रकार कमजोर नींव वाला मकान अधिक दिनों तक स्थायी नहीं रह सकता उसी प्रकार अनुशासन से रहित समाज अधिक समय तक सुरक्षित नहीं रह सकता। विद्यार्थियों को अनुशासित रहते हुए अपने कर्त्तव्यों का पालन करना चाहिए तभी वे अपने जीवन में शेष सफलताएँ प्राप्त कर सकेंगे।

'विद्यार्थियों से...' खण्ड तीन 'परिश्रम' बोधकथा में एक गृहस्थ लोहार की कथा है। वह बहुत परिश्रम करता, उसका पुत्र अब बड़ा हो गया है उसे भी लोहार बनाना चाह रहा है पर बच्चा आनाकानी करता है। पिता ने एक दिन थक-हारकर कहा कि अगर तुम कमाकर दो रुपये भी नहीं देते हो तो तुम्हारा खाना-पानी बन्द हो जायेगा। लड़का पहले तो माँ, बहन से पैसे लेकर पिता को देता है तो पिता उन पैसों को भट्ठी में डाल देता है। फिर एक दिन वह कमाकर दो रुपये पिता को देता है। जब पिता इस बार रुपये को भट्ठी में डालने जाता है तो लड़का उसे रोक देता है। पिता को तो बस इसी दिन का इन्तजार था कि उसका लड़का अपनी कमाई का महत्त्व समझे।

इस बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि "प्रिय विद्यार्थियों, यही वह अवसर है, यही वह समय है और मैं ठीक-ठीक बता दूँ आपको कि यही वह उम्र है, जब आप ऐसा कुछ कर सकते हैं। जिसका परिणाम अद्‌भुत हो सकता है, आश्चर्यजनक हो सकता है, विस्मयकारी हो सकता है। क्योंकि समय बीत जाने के बाद फिर ऐसी परिस्थितियाँ मिलने वाली नहीं हैं। अगर आप पढ़ाई ईमानदारी से करते हैं, मेहनत से करते हैं, लगन से करते हैं तो निश्चित रूप से आपका यह कार्य पूर्ण होगा और आप सफलता प्राप्त करेंगे।"5

हर सफल इन्सान की जिन्दगी में संघर्ष की एक कथा होती है। यदि हम संघर्ष करते हैं तो सफलता अवश्य ही मिलती है। जब हम जीवन में संघर्ष कर रहे होते हैं तो आन्तरिक धैर्य बनाए रखना बहुत ही कठिन होता है। परन्तु यदि हम इन परिस्थितियों में सामञ्जस्य स्थापित करते हुए धैर्य बनाये रखते हैं तो सफलता का मिलना तय हो जाता है। शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ बच्चों को जीवन में संघर्ष करते हुए सफलता प्राप्त करने की प्रेरणा देती हैं। इनके कथा-प्रसंग सफलता की कुंजी के समान हैं।

'विद्यार्थियों से...' खण्ड- तीन 'प्रतिकूल परिस्थितियाँ' बोधकथा में एक सरल व मेहनती व्यक्तित्व के किसान की कथा है। जो कठिन परिश्रम से अपनी जिम्मेदारियों का निर्वाह करता है। इसकी कथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि - "हमें संघर्ष को कहना होगा कि हे संघर्ष! तू धन्य है, तेरी प्रेरणा से हमने क्या-क्या नहीं कर दिखाया। जो भी हम कर दिखाने चल रहे हैं या जो कुछ भी हम कर दिखाने वाले हैं या जो कुछ भी हम कर दिखायेंगे, वह सब कुछ तेरे ही कारण होगा, तेरा ही श्रेय होगा, तू ही हमारा मार्गदर्शन करेगा, तू ही उसमें से निकलकर सामने आयेगा और जो भी होगा वह सब तेरे ही कारण होगा।"6

जहाँ तक मैं समझ पा रहा हूँ कि शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ जीवन–संघर्ष से पूर्णतः जुड़ी हुई हैं। कथाओं से इसकी छटा देखने को मिलती-ही-मिलती है। हर किसी का जीवन सुख वैभव से नहीं भरा रहता है। हमें परिस्थितियों से संघर्ष करके ही जीना है। हमें प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करते हुए संघर्ष का सम्मान करना चाहिए। यदि आप आशावादी हैं तो आप समस्या का पता लगाने की कोशिश करेंगे और किसी को दोष दिये बिना इस पर काम करने की कोशिश करेंगे। भले ही आप दूसरों की नजर में विफल होंगे, लेकिन आप आन्तरिक रूप से बढ़ रहे होंगे।

'विद्यार्थियों से...' खण्ड चार 'साहसी बनें' बोधकथा में महाराजा रणजीत सिंह और मुगलों के बीच चल रहे युद्ध से सम्बन्धित कथा है। उन्होंने मुगलों के छक्के छुड़ा दिये। जब मुगलों को लगा कि अब जीत नहीं पायेंगे तो उसने दो गुप्तचर भेजे और उनके जिम्मे काम लगाया कि किसी तरह से राजा की हत्या कर दो पर वे सफल नहीं हो पाये। उल्टे राजा के पैरों में गिर पड़े। राजा ने उन्हें उठाया और कहा तुम्हारी योजना मैं पहले ही जान गया था। मैं तो अपने साहस की परीक्षा ले रहा था कि क्या इतना साहस मुझमें है। परिणाम तुम सब जान गये, तुम्हें मेरे पैरों में गिरना पड़ा।

इस बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण

सिंह जी कहते हैं कि- "प्रिय विद्यार्थियों, काम चाहे कितना भी कठिन हो, अगर आप उसे साहसी बनकर स्वीकार कर लें तो समझिए, आधा काम हो गया है। काम में कुछ बचा ही नहीं, तनिक सोचिए, इस पर विचार कीजिए। अगर आप अपनी इन आत्मिक शक्तियों का विकास नहीं करेंगे जो आपके अन्दर भरी पड़ी हैं, तो आपका ठिकाना नहीं लगने वाला है। आप कहाँ रहेंगे? कहीं अता-पता नहीं रहेगा।अगर आपको स्वयं को कहीं स्थापित करना है, अगर आप इस समाज में अग्रणी हैं तो समाज को यह बताना होगा कि मैं यहाँ आया हूँ और मेरी यहाँ उपस्थिति है, मेरी उपस्थिति दर्ज होनी है यहाँ।"7

हम इस बात से कभी इंकार नहीं कर सकते कि जिन्दगी का दूसरा नाम संघर्ष है। संघर्ष तो शान्ति देता है। हर सफल व्यक्ति का जीवन कभी-न-कभी संघर्षपूर्ण रहता ही है। इसीलिए आज के हर वर्ग के लोगों को यह बात समझनी होगी कि सही दिशा में किया गया संघर्ष, कड़ी मेहनत, विपरीत परिस्थितियों एवं चुनौतीपूर्ण कार्यों को पूर्ण करके सफलता प्राप्त करना श्रेष्ठ है। जीवन के संघर्ष को एक बोझ के बजाय एक आह्वान मानना चाहिए जिससे जीवन को अर्थपूर्ण और सफल बनाया जा सकता है।

'विद्यार्थियों से...' खण्ड चार में 'खट्टे अंगूर' बोधकथा में एक किसान की कथा है, जो दिन-रात मेहनत करके अपने परिवार का भरण-पोषण करता है। उसकी कथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि - "प्रिय विद्यार्थियों, अगर आपने मेहनत की, आपने प्रयास किया, तो आपकी मेहनत बेकार नहीं जा सकती, जरूर उसमें से कुछ-न-कुछ निकलेगा और जो लोग यह कहते आ रहे हैं कि अंगूर खट्टे हैं, शायद वे स्वयं खटाई खाकर निकले हैं घर से और उन लोगों के मुँह में खटाई अभी भी अपना असर किये हुए है तभी उन्हें सब खट्टा-ही-खट्टा समझ में आ रहा है।"8

जीवन में संघर्ष है प्रकृति के साथ स्वयं के साथ, परिस्थितियों के साथ। अनेक प्रकार के संघर्षों का सामना आए दिन हम सबको करना पड़ता है और इनसे जूझना भी पड़ता है। जो लोग इन संघर्षों का सामना करने से कतराते हैं, वे जीवन से हार जाते हैं। यह जीवन भी उन्हीं का साथ देता है जो संघर्ष करने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं। हर सफल मनुष्य की जिन्दगी में संघर्ष की कहानी अवश्य ही होती है। हम एक सफल मनुष्य को देखकर बहुत प्रसन्न होते हैं और उसके लिए गौरवान्वित भी होते हैं। परन्तु उसके जीवन की सफलता के पीछे के संघर्ष से बिल्कुल अनजान होते हैं।

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-पाँच 'भय का भूत' बोधकथा में एक व्यापारी की कथा है। व्यापारी को अपना कार्य निपटाकर दूसरे शहर जाना है। काम निपटाने में थोड़ा विलम्ब हो गया। रात होने लगी, रास्ते में जंगल पड़ता था। उसे डर तो पहले से ही था पर करता क्या? जाना भी जरूरी था, चल दिया।

जैसे ही व्यापारी जंगल के बीच पहुँचता है, उसे घोड़ों के टापों की आवाज सुनाई पड़ती है। उसे लगता है कि मेरे धन को तो लूटेंगे ही कहीं मेरी जान भी न ले लें। अभी कुछ उपाय सोच ही रहा था कि उसे याद आया कि इसी रास्ते में देवी माँ का मन्दिर है उनसे जो माँगो मिल जाता है। जल्दी-जल्दी वह मन्दिर पहुँचकर देवी माँ से अपनी समस्या बताता है। माँ उसे अनेक प्रकार से सुरक्षित होने के लिए बताती हैं पर वह भय के कारण कुछ भी करने में असमर्थता जताता है। अन्त में देवी माँ कहती हैं कि ऐसे में मैं क्या कोई भी तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकता है।

इस बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि - "सफलता के पीछे जो सबसे महत्त्वपूर्ण चीज है वह है पुरुषार्थ। पुरुषार्थ के बारे में कहा गया है कि जो दाहिने हाथ से पुरुषार्थ करता है। पुरुषार्थ कैसे किया जाता है ? दाहिने हाथ से किया जाता है और जब आप दाहिने हाथ से पुरुषार्थ करते हैं तो उस समय आपका बायाँ हाथ क्या करता है ? खाली नहीं रहता है, बायें हाथ को सफलता वरण किये रहती है। जैसे-ही आप दाहिने हाथ से पुरुषार्थ शुरू करते हैं, सफलता आपके बायें हाथ पर आकर बैठ जाती है और आप सफल हो जाते हैं।"9

सफलता और संघर्ष एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। ये दोनों साथ-साथ ही चलते हैं। चुनौतियाँ केवल बुलन्दियाँ छूने की प्रेरणा ही नहीं देती हैं बल्कि वहाँ टिके रहने की भी प्रेरणा देती हैं। यह बात बहुत ही ठीक है कि संघर्ष करते-करते हम उसमें कुशल हो जाते हैं, उसे करना आसान हो जाता है। पर वही करते रह जाना हमें अपनी ही बनाई सुविधा के घेरे में कैद कर लेता है।

रोम के महान दार्शनिक सेनेका कहते हैं कि- "कठिन रास्ते भी हमें ऊँचाइयों तक ले जाते हैं। अनिश्चितताएँ हमारी शत्रु नहीं हैं। कुछ स्थायी नहीं होना बताता है कि हम और आप कोई भी जीवन की असीमित सम्भावनाओं को जान नहीं सकते। कभी आप अनिश्चितताओं की तरफ बढ़ते हैं तो कभी वे

आपको ढूँढ लेती हैं। यही जीवन है।"

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-पाँच 'स्वपरीक्षण' बोधकथा में एक बालक की कथा है जो पी.सी.ओ. पर जाकर एक नम्बर मिलाने को कहता है। नम्बर मिलाने पर उधर से एक महिला की आवाज आती है। बालक उनसे काम माँगता पर वह महिला मना कर देती है, लेकिन वह हार नहीं मानता है फिर नम्बर मिलाता है, अपनी बात कहता है पर इस बार भी महिला मना कर देती है। बालक अब अन्तिम बार मिलाता है फिर भी महिला मना कर देती है।

पी.सी.ओ. वाले कहते हैं तुम झूठ में तीन-तीन बार फोन करके परेशान हुए। उस लड़के ने बताया - मैं परेशान नहीं हुआ। मैं तो यह जानना चाहता हूँ कि मैं जो कार्य कर रहा हूँ उससे मेरा मालिक सन्तुष्ट है या नहीं। अगर वह सन्तुष्ट नहीं होता तो निश्चित रूप से मुझे ऑफर दिया होता और कहता कि मेरा आदमी तो बड़ा दुष्ट है।

इस बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि "आपको भी निरन्तर अपना परीक्षण करते रहना चाहिए। मैं एक बात और आपसे कहना चाहता हूँ, आपके अन्दर सम्वेदना होनी चाहिए। अगर आप अपने अन्दर सम्वेदना नहीं उत्पन्न कर सकते तो आप किसी को समझ नहीं सकते हैं। आप कुछ भी कर जायेंगे फिर भी रिजल्ट जीरो होना है। क्योंकि जो परिणाम आप देखते हैं वह परिणाम नहीं है और जिसे देख नहीं पाते हैं वही परिणाम है।"10

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-पाँच 'छुट्टी' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि- "प्रिय विद्यार्थियों, आप थोड़ा-सा अपने में परिवर्तन लाइए, तथ्यों को समझिए और उस समझ के अनुसार आचरण कीजिए, निश्चित ही आप अपने लक्ष्य तक पहुँचेंगे। इन गौण चीजों को छोड़ें, इन तुच्छ चीजों के फेर में मत पड़ें, भटकाव से बचें। ये जो ढेरों काम आपके पास हैं उसका कोई मतलब नहीं है। आपको उसके बारे में सोचना नहीं है। उसके बारे में कोई पूछता नहीं है, वह कोई लक्ष्य नहीं है, वह महत्त्वपूर्ण भी नहीं है, जिसके पीछे आप भटक रहे हैं, जिसके पीछे आप परेशान हैं। क्यों परेशान हैं ? मैं यही न आपसे कह रहा हूँ कि अपने विवेक को जागृत कीजिए, अपनी दृष्टि को मंजिल पर रखिए, निश्चित ही आप अपने लक्ष्य पर होंगे।"11

दुनिया में दो प्रकार के मनुष्य होते हैं। एक वे जो सामान्य रूप से चलने वाली जिन्दगी जीना पसन्द करते हैं और उन्नति के लिए जीवन में आने वाली कठिनाइयों को पसन्द नहीं करते हैं। दूसरी तरह के वे लोग होते हैं, जो अपना लक्ष्य निर्धारित कर लेते हैं और उसे प्राप्त करने के लिए संघर्ष का रास्ता अपनाते हैं। ऐसे लोगों का जीवन आसान नहीं होता है। इन्हें हर मोड़ पर विभिन्न रुकावटों का सामना करना पड़ता है। पर ऐसे लोग इन रुकावटों का सामना करते हैं। कई बार असफलता भी इनके हाथ लगती है। पर इससे ये लोग घबराते नहीं हैं, ये लोग अपनी गलतियों को सुधारते हैं और नये सिरे से संघर्ष करने में जुट जाते हैं। ऐसे ही संघर्षशील व्यक्तित्वों का सृजन करने वाले हैं शिव नारायण सिंह। क्योंकि उनका व्यक्तित्व भी संघर्ष व चुनौतियों को स्वीकार कर आगे बढ़ने व बढ़ाने वाला है।

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-छः 'फूल' बोधकथा में एक राजा व चोर की कथा है। राजा अपने राज्य में हो रही अधिक चोरियों के कारण परेशान है। इसलिए उसने बहुत से सैनिकों को तैनात कर दिया। सैनिकों को सफलता भी मिली। तीन चोर पकड़े गये। सुबह राजदरबार में उन्हें लाया गया। राजा ने उन्हें फाँसी की सजा सुना दी। फाँसी वाले दिन दो चोर बहुत परेशान थे। पर एक शान्त होकर विचार कर रहा था। उसने सैनिकों से कहा मुझे राजा से मिलना है, बहुत जरूरी है, नहीं तो यह एक गूढ़ विद्या हमारे साथ ही समाप्त हो जायेगी।

सैनिक राजा से चोर की बात कहकर उसे राजा के पास ले जाते हैं। चोर राजा से कहता है - राजन ! मुझे सोने का वृक्ष उगाने की विद्या आती है। राजा कहता है- बताओ। तब चोर कहता है कि - राजन ! पूर्णिमा की रात्रि में सरसो के दाने के बराबर सोने का दाना बनाकर आपकी फुलवारी में बोया जाये, तो आने वाली पूर्णिमा को उस वृक्ष में सोने के फूल खिलेंगे।

पूर्णिमा आने वाली है। सारी तैयारी की जा चुकी है। पूर्णिमा की रात्रि को राजा ने चोर से कहा - अब जल्दी से सोने के बीज बोओ। चोर कहता है- राजन यही तो कठिनाई है, नहीं तो मैं भी राजा नहीं बन गया होता ? अरे ! जिसने चोरी नहीं किया है वही इसे बो सकता है। चोर राजा से बोने के लिए कहता है। राजा गुरुकुल में भोजन की चोरी किये थे इसलिए वे नहीं बो सके। इसी प्रकार रानी, मन्त्री व पूरा राजदरबार ही बोने के लिए तैयार न हो सका। तब चोर ने कहा - जब पूरा राजदरबार ही चोर है तो फाँसी केवल मुझे ही क्यों ? ऐसे में चोर ने राजा की बुद्धि खोल

दिया।

इस बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि "प्रिय विद्यार्थियों, मैं तो कहूँगा वह चोर बड़ा साहसी है। विषम परिस्थिति में, उस संकट के क्षण में भी उसने अपने अन्दर साहस रखा, धैर्य रखा और अपने को उबार लिया। मेरा आपसे केवल यही कहना है कि अभी उबारने जैसी स्थिति आपके साथ नहीं है। आपके साथ जो प्रॉसेस है इसके साथ हो लीजिए और समझिए आपको आपका लक्ष्य मिलना ही है, निश्चित ही लक्ष्य आपका इन्तजार कर रहा है।"12

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-छः 'स्वर्ण बेल पत्र' बोधकथा में द्वापरयुग के महानायक श्रीकृष्ण के नेतृत्व से सम्बन्धित है। महाभारत का युद्ध अपने अन्तिम चरण में था। तभी कहीं से पता चलता है कि आज के दिन जो भगवान शिव को स्वर्ण बेल से ढक देगा, जीत उसी की होगी। यह बात पाण्डवों और कौरवों तक भी पहुँचती है।

कौरव पक्ष का प्रमुख दुर्योधन आदेश देता है आनन-फानन में स्वर्ण बेल पत्र तैयार होने लगा। इधर पाण्डवों में सभी लोग मुँह लटकाए बैठे हैं। भगवान श्रीकृष्ण आते हैं उदासी का कारण पूछते हैं, कोई कुछ बताता नहीं है तब वे कहते हैं कि मैं समझ गया तुम्हारी चिन्ता का कारण स्वर्ण बेल पत्र है। वे अर्जुन से कहते हैं तुम अपनी सारी चिन्ता छोड़ो क्योंकि जीत तुम्हारी सुनिश्चित है। तुम अपना गाण्डीव उठाओ और इन्द्र का आह्वान करो, वे तुम्हारी बात अवश्य सुनेंगे। उनके बगीचे में स्वर्ण बेल पत्र का पौधा है।

अर्जुन गाण्डीव उठाते हैं, बाण छोड़ते हैं और इन्द्र के बगीचे से स्वर्ण बेल पत्र टूट-टूट कर सीधे शिव जी के ऊपर गिरने लगते हैं और देखते-ही-देखते शिव जी ढक जाते हैं। परिणाम बताने की जरूरत ही नहीं है। आप जानते ही हैं कि पाण्डव जीत गये।

इस बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि - "प्रिय विद्यार्थियों, मैं समझता हूँ बातें आप बहुत ढंग से समझते हैं और जब समझते हैं तो यह भी जान रहे हैं कि सफलता के लिए संघर्ष जरूरी है, चुनौतियों का सामना करना जरूरी है। आप सोच सकते हैं, आप देख सकते हैं, आप इस बात को महसूस भी कर रहे हैं कि पाण्डवों को कितने सीमित संसाधन में कितने अभाव में संघर्ष करना पड़ा और संघर्ष का परिणाम आपने देखा ही कि भगवान शिव को भी उन्हीं पर प्रसन्न होना पड़ा। मैं बार-बार आपसे यही कहता हूँ कि बस लग जाइए, जैसे ही लगेंगे, सब कुछ आपके अनुकूल होगा।"13

'मूल्यों के निर्माण कलश' में समीक्षात्मक लेख 'बोधकथाओं से विद्यार्थियों को जीवन-मूल्यों की शिक्षा' के माध्यम से डॉ. कालीचरण यादव कहते हैं कि - "श्री शिव नारायण सिंह की सकारात्मक सोच कथाओं में स्पष्ट नजर आती है। वर्तमान व्यवस्था और परिस्थितियों में जहाँ कुछ नहीं हो सकता का भाव युवा वर्ग में घर करता जा रहा है। नकारात्मक सोच प्रतिभावानों का गला दबा रही है। ऊर्जा का यह क्षरण पलायनवाद को जन्म दे रहा है। सभी की सोच एक तरह की क्यों बन गयी। बिना कुछ लिए-दिए ऑफिसों में कोई काम नहीं हो सकता। सभी भ्रष्ट हैं, हमारे ईमानदार होने भर से क्या होगा। बिना एप्रोच और पैसे के नौकरी नहीं मिल सकती। ऐसी नकारात्मक सोच से समाज दिशाहीन होता जा रहा है। सकारात्मक सोच की पहल आखिर कौन करेगा? इस प्रश्न का उत्तर है - शिव नारायण सिंह और उनकी पुस्तक 'विद्यार्थियों से...'।"14

इसी समीक्षात्मक लेख में उन्होंने यह भी कहा है कि - "सुख-दुःख, हर्ष-शोक, चिन्ता, भय, व्यग्रता आदि समस्त परिस्थितियों में यदि ग्रन्थ सदैव एक सच्चे परामर्शदाता मित्र के दायित्व को निभाता है तो यह उसकी सार्थकता है। जब मनुष्य अन्तर्द्वन्द्वों से ग्रस्त होता है, उसके विचारों का समाधान नहीं हो पा रहा है या कहें बुद्धि काम नहीं कर रही है, ऐसे समय में सच्ची पुस्तकें ही राह सुझाती हैं, कर्मपथ का वे बोध कराती हैं। 'विद्यार्थियों से...' की लघु बोधकथाएँ यह काम करने में पूर्णतः समर्थ हैं।"15

' मूल्यों के निर्माण कलश' में समीक्षात्मक लेख 'सफलता का सोपान बनती बोधकथाएँ' में डॉ. विजय प्रकाश सिंह कहते हैं कि - "जीवनानुभव, इतिहास, पुराण व लोककथाओं से ऐसे शहद का निर्माण किया है, जो पाठक के लिए, निश्चय ही पुष्टिकारक सिद्ध होगा। इस अनूठे किस्सागोई के सृजनकर्ता ने शिक्षक की भूमिका अदा करते हुए 'विद्यार्थियों से...' के माध्यम से नए समाज की रचना करने का एक सराहनीय प्रयास किया है। यहाँ यह कहना उचित ही नहीं, आवश्यक भी है –

'न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।"16

शिव नारायण सिंह बच्चों में राष्ट्रीय भावना, देश-प्रेम, सेवा-भाव, पूर्ण समर्पण, अपनापन व मानवीय मूल्यों को विकसित करते हैं। बच्चों में अदम्य उत्साह, समर्पण की भावना और कार्य करने की अद्‌भुत क्षमता समाहित रहती है। पर इन्हें जागरूक

करना होता है। बच्चों के भीतर अपरिमित शक्ति एवं गुणों का भण्डार विद्यमान है। जिसको वे प्रति दिन प्रार्थना-सभा में प्रेरक प्रसंगों के माध्यम से बच्चों की सुसुप्त शक्तियों एवं गुणों को जाग्रत करके उन्हें सही दिशा एवं मार्गदर्शन करने का प्रयास करते हैं।

' विद्यार्थियों से... ' खण्ड- सात ' नियम' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि - "प्रिय विद्यार्थियों, बाधाएँ बहुत हैं। गिनेंगे तो गिनते रह जायेंगे। यहाँ आपको सिपाही मिला, दरोगा मिला और मजिस्ट्रेट जी भी मिले। ऐसा नहीं है कि बस इतने से बुरा हो जाना है। प्रतिक्षण, हर क्षण आपको कोई-न-कोई ऐसी विरोधी स्थितियाँ मिलती हैं, विरोधी परिस्थितियाँ मिलती हैं। ऐसी स्थिति में भी आपको अपनी सहज सोच से, स्पष्ट दृष्टि से, अपनी समझ से स्वानुशासन से आगे बढ़ना है।"17

'तालमेल' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि "प्रिय विद्यार्थियो, जो तुम हो, जो तुम्हारी वास्तविकता है, वह कठिन परिस्थितियों में स्वतः बाहर आ जाती है। पहली के साथ अभी भी एक माँग है, एक डिमाण्ड है, एक इच्छा है उसकी, उसे स्वर्ग चाहिए और दूसरी के साथ निराशा है, जो जैसा है, बस स्वीकार्य है और डूब जाती है लेकिन तीसरी के साथ ? उसे यथार्थ और सच्चाई का बोध है। वह परिस्थितियों के साथ सामंजस्य बैठाने के लिए तत्पर है। वह पानी के अन्दर रहना सीखना चाहती है और यही जीवन का मूल मन्त्र है। जिसने भी परिस्थितियों के साथ तालमेल बैठा लिया, समझो, उसने अपना उद्देश्य पा लिया।"18

निष्कर्ष- इस प्रकार यहाँ स्पष्ट है कि शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ जीवन की आधारशिला, मानवीय मूल्यों की संवेदना, नैतिकता और जीवन–संघर्ष से जुड़ी हुई हैं। ये बोधकथाएँ जीवन–पथ पर न केवल पथ-प्रदर्शक की भूमिका निभा रही हैं, बल्कि पथभ्रष्ट होने से भी रोक रही हैं। लोगों में छिपे मनोविकारों और कलुषताओं को धो-मिटाकर अँधेरे में आशा की लौ की भाँति प्रज्ज्वलित होकर निरन्तर नई ऊर्जा का संचार कर रही हैं। संघर्षों की प्रेरणा देती हुई जीवन–पथ पर आगे की ओर बढ़ा रही हैं। अन्ततः हम कह सकते हैं कि जीवन–संघर्ष का विजय सोपान हैं शिव नारायण सिंह जी की बोधकथाएँ।

सन्दर्भ सूची –

1. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 01, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 210
2. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 01, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 115
3. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 074
4. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 164
5. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 03, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 126
6. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 03, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 324
7. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 04, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 70 – 80
8. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 04, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 231
9. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 069
10. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 255
11. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 425
12. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 063
13. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 216
14. 'मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 079
15. 'मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 079
16. 'मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 174
17. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 07, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 105
18. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 07, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 499

वर्ष: 2026 | वॉल्यूम: 02 | अंक: 03 | कुल अंक: 04

शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ : जीवन की अनुपम अभिव्यक्ति

पल्लवी जालान
शोधार्थी
बोधकथा शोध संस्थान
शिवलोक, गोरखपुर उ.प्र.

प्रस्तावना – भारतीय कथा परम्परा ने प्राचीन काल से ही हमारे समाज की सामूहिक स्मृति, नैतिकता, मानवीयता, सांस्कृतिक निरन्तरता को समृद्ध करती रही हैं। बोधकथाएँ तो जीवन के हर क्षेत्र में रची बसी हैं। इनमें ग्रामीण परिवेश, सांस्कृतिक संस्कार और आधुनिक वैज्ञानिक चेतना का सन्तुलित समन्वय दिखाई देता है, जिसमें जीवन की सफल अभिव्यक्ति हुई है।

प्रस्तुत शोध आलेख 'शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ : जीवन की अनुपम अभिव्यक्ति' विद्यार्थी जीवन के सकारात्मक सोच, सकारात्मक मनोविज्ञान और व्यक्तित्व विकास पर केन्द्रित है। इस शोध आलेख में यह दर्शाया गया है कि सकारात्मक आत्मचर्चा, लक्ष्य निर्धारण और मानसिक अभिरुचि के माध्यम से व्यक्ति अपनी क्षमता को बढ़ाकर सफलता को प्राप्त कर सकता है।

बोधकथाएँ जीवन के गूढ़ रहस्यों, नैतिकता और मानवीय अनुभवों को सरल भाषा में समझाने वाली एक अनुपम अभिव्यक्ति हैं। ये कथाएँ विशेषकर महात्मा बुद्ध के जीवन और जातक कथाओं से प्रेरित स्वार्थ, मोह और भय से ऊपर उठकर करुणा, सत्य और आत्म–ज्ञान का मार्ग दिखाती हैं।

बीज– शब्द – बोधकथाएँ, सांस्कृतिक परम्पराएँ, मानसिक अभिरुचि, सकारात्मक आत्मचर्चा, वैज्ञानिक चेतना, आत्मज्ञान, अनुपम अभिव्यक्ति।

शोध आलेख– कथाएँ, किस्से या बोधकथाएँ किसी भी समाज के विकास में, उन्नति में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हमारे भारतवर्ष की सभ्यता व संस्कृति के विकास में तो इनकी भूमिका विशेष रूप से उल्लेखनीय है। भारतीय कथा परम्परा, हमारे समाज की सांस्कृतिक एकता, नैतिक चेतना और जीवन दृष्टि का मूल आधार रही है। इसका उत्थान प्राचीन काल में वैदिक आख्यानों, पुराणों, महाकाव्यों, जातक कथाओं, लोककथाओं तथा दन्त कथाओं से हुआ है।

बोधकथाएँ जीवन की गहराइयों को जानने समझने, उनमें रची बसी अनमोल शिक्षाओं को आत्मसात करने और यथार्थ से सरोकार होने का सबसे सरल व प्रभावशाली माध्यम हैं। बोधकथाएँ शील, धैर्य, करुणा और आत्म विश्वास जैसे मानवीय मूल्यों को बड़े ही सरल तरीके से प्रस्तुत करती हैं। जातक कथाओं से लेकर आधुनिक बोधकथाओं तक इनका उद्देश्य मनुष्य के चरित्र-निर्माण व व्यवहार में सुधार लाना है। ऐसे समय में शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ जीवन की अनुपम अभिव्यक्ति बनकर अपने ज्ञान के प्रकाश से अज्ञानता रूपी अन्धकार को नष्ट करते हुए विद्यार्थियों के पथ को आलोकित कर रही हैं।

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-एक में 'कथनी और करनी' बोधकथा है, जिसमें एक बहेलिया है जो जंगल में शिकार करता है। उसी जंगल में एक सन्त रहते थे। सन्त जी से बहेलिया बहुत प्रभावित था। एक दिन बहेलिए ने एक तोता पकड़ा और पिंजरे में बन्द कर उसे सन्त जी को दे दिया। सन्त जी उसे साधुवाद देते हैं। तोता आश्रम में रहने लगा। सन्त जी उसे मन्त्र सिखाते हैं और लोगों का स्वागत करना भी सिखाते हैं। तोता सब कुछ सीख लेता है। अब जो भी लोग आते हैं उनका स्वागत करना, मन्त्र सुनाना।

एक दिन सन्त जी ने उसे मोक्ष का मार्ग बताया और याद कराया- पिंजरा छोड़ो, ऊँचे उड़ो। तोते ने यह याद कर लिया। एक दिन तोते को जब भोजन दिया गया तो पिंजरा बन्द करना भूल गया। तोते ने भोजन कर लिया, पिंजरा खुला है, वह बाहर झाँकता है और निकलता है। उसे बहुत आनन्द आता है। फिर अन्दर पहुँचकर सिर बाहर निकालकर कहता है–

पिंजरा छोड़ो ऊँचे उड़ो। लेकिन फिर अन्दर दुबककर बैठ जाता है। आश्रम में आये हुए लोग परेशान हैं। सन्त जी कहते हैं– हममें से बहुत से लोगों की यही स्थिति है। हम बातों को तोते की तरह रट लेते हैं लेकिन उन्हें कार्य का स्वरूप नहीं प्रदान कर पाते हैं।

इस बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि " प्रिय विद्यार्थियों, जो आप कहते हैं, जब तक वह नहीं करेंगे यानी आपकी कथनी और करनी का अन्तर जब तक समाप्त नहीं हो जायेगा, कथनी और करनी के बीच की दूरी शून्य नहीं हो जायेगी, तब तक आपको कोई उपलब्धि मिल नहीं पायेगी। आपको कहा जाता है ऐसे कीजिए, आपको कहा जाता है वैसे कीजिए तो आप अपना टाइम-टेबल बनाते हैं, अपनी रूटीन फिक्स करते हैं, लेकिन क्या आप वैसा कर पाते हैं ? जब तक आप कथनी और करनी के बीच की दूरी को शून्य नहीं कर पायेंगे, आपको उपलब्धि नहीं मिल पायेगी, यह बहुत बड़ा मन्त्र है।"1

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-एक के 'शिष्टाचार' बोधकथा में मनोचिकित्सक के पास दो व्यक्ति इलाज के लिए लाये जाते हैं। मनोचिकित्सक दोनों को एक ही कमरे में रखता है और खिड़की के परदे से छिपकर उनकी स्थिति को देखता है और बाद में ट्रीटमेन्ट की बात सोचता है। मनोचिकित्सक परेशान हैं क्योंकि एक बोलता तो दूसरा कई घण्टे तक उसे चुपचाप सुनता और दूसरा बोलता तो पहला कई घण्टे तक चुपचाप सुनता। आखिरकार मनोचिकित्सक उनसे पूछता है तो वे एक साथ कहते हैं कि - क्या आपको बातचीत का शिष्टाचार नहीं मालूम है, पर हमें तो मालूम है। जब कोई बोले तो सुनने वाले को चुप रहना चाहिए और हम लोग वही करते हैं।

मनोचिकित्सक ने अपनी डायरी में लिखा कि आज जीवन में पहली बार मुझे ज्ञात हुआ कि क्या पागल व्यक्ति भी शिष्टाचार निभा सकता है।इस बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि - "प्रिय विद्यार्थियों, आप अपनी ऊर्जा का संचय कीजिए, उसे उचित स्थान पर खर्च कीजिए और बातचीत के शिष्टाचार को समझिए। अगर आप इसे समझते हैं तो यह जीवन भर आपके काम आयेगा। ऐसा नहीं है कि हम यहाँ बोल रहे हैं और इसके बाद यह काम खत्म हो जायेगा। शिष्टाचार बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। जीवन के तमाम कदमों पर, तमाम परिस्थितियों में आपको इससे दो-चार होना पड़ता है। ऐसा न हो कि आपमें शिष्टाचार की कमी रह जाये और वहीं असफल हो जायें। तो आप ऐसी स्थिति ही क्यों आने देंगे।"2

शिव नारायण सिंह की विलक्षण प्रतिभा के बारे में समीक्षात्मक लेख 'धरती पर धूल-कण खोजती वर्षा की बूँदें' के माध्यम से सर्वेन्द्र विक्रम सिंह कहते हैं कि - "मैं शिव नारायण सिंह को तब से जानता हूँ जब वे अपने जीवन लक्ष्य के लिए कर्मक्षेत्र में पदार्पण कर रहे थे। मुझे लगा कि यह व्यक्ति विलक्षण प्रतिभा का धनी है और एक-न-एक दिन अवश्य ही कुछ नया करेगा। मुझे हर्ष है कि शिव नारायण सिंह का यह प्रयोग सफलता पूर्वक आगे बढ़ रहा है और वे 'विद्यार्थियों से...' के माध्यम से देश-दुनिया के युवाओं को प्रेरणा प्रदान कर एक ओर प्राचीन भारतीय परम्परा को नये वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ प्राण-प्रतिष्ठित करते हुए नये विश्व की संरचना में लगे हुए हैं।"3

भारतीय संस्कृति में पारिवारिक-संस्कारों को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाता रहा है। हमारे यहाँ वरिष्ठ जन ही संस्कृति और संस्कारों का प्रचार-प्रसार करते रहे हैं। परन्तु जिस प्रकार चन्द्रमा और सूर्य को ग्रहण लग जाता है, उसी प्रकार हमारे संस्कारों को भी ग्रहण लगने लगा है। नैतिक मूल्य जर्जर हो कर गिर रहे हैं, परम्परागत संस्कार पश्चिमीकरण को भेंट चढ़ गये हैं। पूँजी, पैसे और भौतिकता ने नये मूल्य और रिश्ते स्थापित कर लिये हैं।

ऐसे में आधुनिकीकरण और बाजारीकरण के सम्बन्ध में विजय बहादुर सिंह का कथन है कि - "विश्व बाजारवाद के पीछे छुपे खतरनाक मन्सूबे के लिए अंतरराष्ट्रीय अपराधी सरगना की तरह खड़ा उत्तर पूँजीवाद तमाम प्राचीन सभ्यताओं को हाँक कर ले जाता, आधुनिकता और उसकी गुलामी से लगा पश्चिम का विज्ञानवाद सच्चा औद्योगिकी का विषय है, जो हिन्दी अकादमस बेचारी की ओर चिन्ताओं को रेखांकित करता है।"4

भूमण्डलीकरण के प्रभाव से हम ऐसे सांस्कृतिक युग में पहुँच गये हैं कि हम न तो पुरातनता को ही पूरी तरह छोड़ पा रहे हैं और न ही नवीनता को पूर्णतः स्वीकार कर पा रहे हैं। इसलिए हम बहुत बुरी तरह से प्रभावित हो रहे हैं। संक्रमण की इस दशा ने

संसार की हर संस्था को दुष्प्रभावित किया है। 'परिवार' नामक संस्था सबसे अधिक प्रभावित हुई है।

इस दौर में शिवनारायण सिंह की बोधकथाएँ जनपक्षधर बनकर हमारे सामने उपस्थित हुई हैं। 'मूल्यों के निर्माण कलश' में समीक्षात्मक लेख 'बोधकथाओं की सार्थकता सिद्ध करने का भगीरथ प्रयास' के माध्यम से डॉ. रेवती रमण जी कहते हैं- "बोधकथाएँ मर्म को छू लेती हैं तो ज्ञानचक्षु खुल जाते हैं। ऐसे ही साहित्य की कोख से अपनत्व, आत्मीयता, सौहार्द्रता की सुगंध उत्पन्न होती है। मनुष्य बड़े स्वार्थ और हित के लिए छोटे स्वार्थ का त्याग करता है। त्याग, समर्पण, स्वार्थ, कष्ट, सहिष्णुता का बोध ऐसे ही साहित्यों के द्वारा होता है। सभ्यता और संस्कृति के अभाव में साहित्यों का महत्त्व निर्विवाद है। साहित्य संस्कृति के विरुद्ध नहीं होते हैं, वरन् कालांतर में संस्कृति के ही अंग बन जाते हैं। वास्तव में ऐसे साहित्य-संस्कृति की जड़ता को दूर करके उसे गतिशील बनाए रखते हैं। बोधकथाओं में मनुष्य की वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन की समृद्धि हेतु मानवीय भाव उत्पन्न होते हैं।"5

इसी समीक्षात्मक लेख में उन्होंने यह भी कहा है कि- "विद्यार्थियों से...' पुस्तकें एक ऐसी दिव्य ज्योति धारा है, जिनसे बोधकथा परम्परा को नवीन आलोक प्राप्त हुआ है। बोधकथा परम्परा को 'ईसप' की कहानियों ने किसी तरह से जीवित रखा, किन्तु 'विद्यार्थियों से...' ने इस परम्परा को गतिशीलता प्रदान की है। इनके द्वारा तो बोधकथा परम्परा में जान-सी आ गई है। मेरा विश्वास ही नहीं वरन् यही सत्य है। साहित्य जगत् में इनका योगदान अविस्मरणीय रहेगा।"6

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-दो की 'आतुरता' बोधकथा में एक तपस्वी की कथा है। जो जंगल में तपस्या कर रहे थे। नारद जी उधर से गुजरे तो तपस्वी ने उनसे आतिथ्य स्वीकार करने का निवेदन किया। नारद जी आतिथ्य स्वीकार कर उनकी कुटी में पहुँचते हैं। आतिथ्य सत्कार के बाद जब नारद जी चलने को होते हैं तो तपस्वी उनसे कहते हैं कि जब आप नारायण जी से मिलियेगा तो मेरा यह निवेदन उनसे कीजिएगा कि मुझे उनके दर्शन कब होंगे।

नारद जी विष्णुलोक पहुँचकर नारायण जी से मिले, हालचाल हुआ और लौटते वक्त तपस्वी की बात कहते हैं। तो नारायण जी कहते हैं उस तपस्वी को कई जन्म लेना पड़ेगा तब दर्शन होगा। नारद जी वहाँ से विदा लेकर पृथ्वीलोक आते हैं और तपस्वी से नारायण जी की बात बता देते हैं। तपस्वी बहुत प्रसन्न हुए कि मुझे प्रभु के दर्शन होंगे भले कई जन्म क्यों न लेना पड़े। तपस्वी पूरे मनोयोग से तपस्या करने लगते हैं। जिसके परिणाम स्वरूप प्रभु उन्हें दूसरे दिन ही दर्शन दे दिये।

इस बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी जीवन की सुन्दर अभिव्यक्ति को प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि– "प्रिय विद्यार्थियों, आप क्या चाहते हैं, आपकी क्या इच्छा है, अब मुझे यह बताने की जरूरत नहीं है। यह तो आपने स्वयं तय किया है, यह आपका अपना तय किया हुआ है, यह आपका अपना विचार है, यह आपकी अपनी सोच है तो कोशिश भी आपको ही करनी होगी। आपको खुद ही लगना होगा। तपस्वी लगे और रिजल्ट आपने देखा, दूसरे ही दिन आ गया। आप भी लगिए, रिजल्ट इसी समय आ जाएगा, दूसरे दिन की जरूरत ही नहीं होगी आपको।अभी लगने लगेगा कि आप अपने लक्ष्य के बहुत करीब हैं, आपको आपका उद्देश्य मिला हुआ है, जो आप बनना चाहते हैं वह तो आप बन ही रहे हैं, बहुत कुछ बन चुके हैं। आप कोशिश कीजिए, लगिए, निश्चित रूप से आपको आपका उद्देश्य मिलेगा।"7

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-दो की 'अद्भुत शक्ति' बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी बच्चों में शक्ति का संचार करते हुए कहते हैं कि– प्रिय विद्यार्थियों, जो भी अद्भुत शक्ति है, आपको ऊँचाई पर पहुँचाने वाली, आपको आपके लक्ष्य तक पहुँचाने वाली वह आपके अन्दर ही निहित है। जरूरत है, मन में झाँककर देखने की। लेकिन झाँकेंगे कैसे ? अपने ही अन्दर कैसे झाँकेंगे ? मुँह खोलना पड़ेगा ? कितना बड़ा मुँह खोलना पड़ेगा ? नहीं-नहीं, मुँह नहीं खोलना पड़ेगा। मन के अन्दर झाँकने के लिए मन की आँखें चाहिए और मन की आँखें कहाँ मिलती हैं ? मन की आँखें मनन करने में हैं। जो भी विषय-वस्तु आपके सामने है, आप उस पर मनन कीजिए, उस पर सोचिए, विचारिए, देखिए आपको मन की वह अद्भुत शक्ति उसी में से निकलती हुई दिखाई देगी, प्रस्फुटित होती दिखाई देगी।"8

सामाजिक चेतना का विकास किसी भी समाज के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह समाज में समानता, स्वतन्त्रता और भाईचारे की

भावना को बढ़ावा देता है। यद्यपि कि भारतीय समाज में सामाजिक चेतना के विकास में अनेक प्रकार की बाधाएँ हैं जो पारम्परिक मान्यताओं, सामाजिक और आर्थिक चुनौतियों एवं शिक्षा की कमी के कारण उत्पन्न होती हैं। इन बाधाओं का निवारण करना समाज में समग्र बदलाव के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ सामाजिक चेतना की पराकाष्ठा को अपने अन्दर समाहित की हुई हैं। 'विद्यार्थियों से...' खण्ड-दो में 'अनदेखे का भय' नामक बोधकथा के माध्यम से वे कहते हैं कि– "प्रिय विद्यार्थियों, अब वक्त आ गया है, जो साल भर आपने पढ़ा है उसे एक साथ प्रस्तुत करना है। अब यह देखना है कि आपने वास्तव में पढ़ाई की है या लापरवाही की है या समय पास किया है। बातें तो बहुत हुई हैं लेकिन उनका सार अब सामने आने वाला है और यही सार कल आपके जीवन का सार बनेगा क्योंकि यह वार्षिक परिणाम है अर्थात् आप इस एक वर्ष में जीवन में एक स्टेप ऊपर उठ जाते हैं, पहुँच जाते हैं और ऐसे ही उठते-उठते एक दिन वहाँ पहुँचते हैं जहाँ आपका उद्देश्य है, लक्ष्य है। अब इस समय जैसी स्टेपिंग होगी, लक्ष्य की महत्ता भी उसी के अनुरूप, अनुकूल होगी। अतः पूरे मनोयोग से लगें, किसी तरह का कोई भय, डर नहीं होना चाहिए।"9

कथाओं या बोधकथाओं का कलेवर अपने आपमें एक विशाल कलेवर है। जिसके सन्दर्भ में डॉ. गणपति चन्द्र गुप्त का कथन आवश्यक हो उठता है, " जब किसी युग विशेष में जीवन का दृष्टिकोण बौद्धिकतापरक, यथार्थवादी, वस्तुवादी एवं व्यावहारिक अधिक होता है तो उसमें गद्य को अधिक प्रोत्साहन मिलता है। जबकि इसके विपरीत जीवन में भावुकता तर्क- शून्यता, आध्यात्मिकता एवं काल्पनिकता की प्रतिष्ठा होने पर उसमें अभिव्यक्ति पद्य का माध्यम अपनाती है।"10

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-तीन की बोधकथा 'परोपकार' के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि– "प्रिय विद्यार्थियों, आपने देखा, इतना अथाह समुद्र है, कितनी अपार जलराशि है उसके पास लेकिन सब बेकार है, किसी काम की नहीं है। कोई प्यासा उसे पी नहीं सकता, अपनी प्यास नहीं बुझा सकता तो वह जल राशि किस काम की है ? नदी के पास उतनी जलराशि नहीं है फिर भी, जो भी है उसे वह अनवरत बाँटती रहती है इसलिए उसका जल मीठा है, उसका सम्मान है, उसकी प्रतिष्ठा है, उसकी पूजा होती है।आप इस दिशा में विचार कीजिए कि आपके पास जो भी है, जितना भी है उसे आप कैसे उपयोगी बना सकते हैं, कैसे उसका लाभ दूसरों को पहुँचा सकते हैं, कैसे कोई दूसरा आपसे लाभान्वित हो सकता है। अगर आप इस गुरुतर दायित्व को निभाने की कोशिश करते हैं, निभाने के प्रति आप समर्पित हैं और आपकी ऐसी सोच है तो निश्चित रूप से आप भी गुरु के सदृश पूज्य हो सकते हैं।"11

'विद्यार्थियों से...' खण्ड तीन की बोधकथा 'समय की महत्ता' में एक एम.बी.ए., गोल्ड मेडलिस्ट विद्यार्थी की कथा है। वह एक कम्पनी में मैनेजर पद के इंटरव्यू के लिए दस मिनट देर से पहुँचता है। मालिक उसे अपने पास बुलाता है और कहता है, तुम लेट हो इसलिए मैं तुम्हें मैनेजर के पद पर नहीं नियुक्त कर सकता। तुम चाहो तो असिस्टेंट मैनेजर के पद पर रह सकते हो। उसे असिस्टेंट मैनेजर के पद से सन्तोष करना पड़ा।

उसने कहा- जब मुझे असिस्टेंट मैनेजर बनाया गया तब मालिक ने कहा- समय पालन से बढ़कर कोई व्यावसायिक योग्यता नहीं होती। अब मैं समय के महत्त्व को समझ गया हूँ। मैं इस पद पर रहते हुए कोशिश कर रहा हूँ कि अगर मैंने समय का प्रबन्धन कर लिया तो कल मैं मैनेजर हो जाऊँगा।

इस बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि– "प्रिय विद्यार्थियों, समय ही जीवन है, समय ही जीवन की गति है, समय ही जीवन की प्रगति है, समय ही जीवन की सफलता का सोपान है, समय ही वह पैमाना है, जिसने इसे साध लिया फिर उसे कुछ और साधने की जरूरत नहीं है। मैंने अभी आपको बताया कि एक क्षण का महत्त्व क्या है। आपको नहीं लगता लेकिन मुझे लगता है, समय बोलता है, समय सुनता है, समय देखता है और समय को समझ पाना ही वास्तविक योग्यता है। जिसने समय को समझ लिया, वह सब कुछ समझ सकता है और जिसने समय को नहीं समझा, वह सब समझकर भी कुछ नहीं कर सकता है।"12

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-चार की 'सम्मान' बोधकथा में एक कंजूस सेठ की कथा है जो बड़ा धार्मिक था सत्संग में उपस्थित रहता। ऐसे ही एक

जगह सत्संग चल रहा था। वह प्रतिदिन उस सत्संग में जाया करता। जब भण्डारा का दिन आया तो भण्डारा के लिए कुछ-न-कुछ चढ़ावा चढ़ाना था। जिसने भी सत्संग में भाग लिया था, जो भी उसमें उपस्थित रहा था, ज्ञान-पान किया था, अपनी हैसियत से, अपनी व्यवस्था से, कुछ-न-कुछ दान कर रहा था।

जब इसकी बारी आती है तो यह सेठ भी एक मैले-कुचैले रुमाल में कुछ रखा रहता है। ले आता है, महात्मा के सामने उड़ेलता है। महात्मा तो इसे पहले से ही जानते थे कि यह बहुत भारी सेठ है। वे इसकी गतिविधियों को भी जानते थे लेकिन कभी कोई टीका-टिप्पणी का अवसर ही नहीं मिला। सत्संग की बात थी। सत्संग शुरू होता वह आता, और सत्संग खत्म होता, चला जाता।

आज वह महात्मा जी के करीब पहुँचा है। वह भी उस भण्डारा में अपनी ओर से कुछ देना चाहता है। जैसे ही वह अपना रुमाल खोलकर उड़ेलता है महात्मा के सामने, उस रुमाल में वह अशर्फियाँ बाँधे रहता है, अशर्फी समझते हैं न आप, वह अशर्फियाँ रखे रहता है, तो जैसे ही महात्मा के सामने उड़ेलता है, महात्मा देखते हैं तो उसी समय महात्मा के मुँह से निकलता है- सेठ जी, उधर न जाओ, इधर आओ ! तुम मेरे बगल में बैठो ! तुम्हारी जगह यहाँ है।

सेठ को बात बड़ी आश्चर्यजनक लगती है। बात तो आपको भी आश्चर्यजनक लग रही होगी। प्रतिदिन सेठ उधर किनारे बैठा प्रवचन सुना करता था और आज जब अशर्फियाँ उड़ेल रहा है, तो महात्मा जी कह रहे हैं- सेठ जी, तुम्हारी जगह उधर नहीं है, आओ, मेरे बगल में बैठो।

सेठ कहता है- आप मेरी इन अशर्फियों का, इन रुपयों का सम्मान कर रहे हैं, न कि मेरा सम्मान कर रहे हैं और चला जाता। महात्मा ने कहा- ये अशर्फियाँ तुम्हारे पास कल तक थीं, अभी थोड़ी देर पहले तक थीं लेकिन मैंने तुम्हारा सम्मान नहीं किया। तुम्हारे इस सम्मान का कारण कुछ और है। तुम भ्रम में मत रहो, तुम्हारे सम्मान का कारण है तुम्हारा त्याग, तुम्हारा मोहभंग होना।

इस बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि– "प्रिय विद्यार्थियों, जिस रास्ते पर आप चल रहे हैं, जब आपकी उपयोगिता बढ़ जाएगी तब भी आपको त्याग करना होता है अपनी उन आवश्यकताओं का जो आपको अपने लिए आवश्यक लगती हैं। लेकिन ऐसा नहीं है कि उनके बिना आपका काम नहीं चल सकता है। अगर आप उनका त्याग करते हैं, समाज के लिए, राष्ट्र के लिए अपने आपको समर्पित कर देते हैं, तो निश्चित रूप से आप महापुरुषों की श्रेणी में आ जाते हैं।

यह सारी यात्रा महापुरुष बनने की ही है। आपको, अपने आपको यूनिक सिद्ध करने की है और आप तभी कर पायेंगे जब आप त्याग सीखेंगे। त्याग कला सीखने की यही उम्र है, अभी आप प्रारम्भ कर दें। इस समय का त्याग कुछ और है, मैंने बताया, कुछ समय के बाद कुछ और त्याग करना होगा। लेकिन यहाँ उस समय की बात कर रहा हूँ, जब आप कुछ बन जायेंगे, आपमें कुछ हुनर होगा, आप कुछ कर सकने की स्थिति में होंगे।"13

समीक्षात्मक लेख 'जीवन के लिए शिक्षा' में कृष्ण कुमार आष्ठाना कहते हैं कि – "व्यक्ति के चरित्र निर्माण के सम्बन्ध में प्रसिद्ध यूनानी विचारक सुकरात का कहना है कि आपस में विचार-विमर्श एवं स्वयं के मस्तिष्क का विकास करके व्यक्ति सही एवं गलत में अन्तर महसूस कर सकता है। अच्छे चरित्रवाले व्यक्तियों के द्वारा ही एक अच्छे राष्ट्र का निर्माण सम्भव है। मस्तिष्क का विकास या आपसी विचार-विमर्श का सीधा- सादा माध्यम शिक्षा है, किन्तु आज के इस दौर में शिक्षा का व्यवसायीकरण हो चुका है। आज की शिक्षा छात्रों के नैतिक विकास में योगदान देने में पूर्णतः असफल सिद्ध होती हुई प्रतीत होती है। इसी शिक्षा-पद्धति में भी एक सूक्ष्म दीपक की लौ जलती हुई प्रतीत हो रही है श्री सिंह के रूप में, जो अपनी बोधकथाओं के माध्यम से छात्रों का नैतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक हर क्षेत्र में विकास करने का प्रयत्न कर रहे हैं।"14

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं की चेतनासंपन्नता के सन्दर्भ में समीक्षात्मक लेख 'मानव निर्माण के अप्रतिम शिल्पी' में सतीश चन्द्र भास्कर कहते हैं कि – "छात्रों को पृथक्-पृथक् कोणों से जाग्रत् एवं चेतनासंपन्न बनाने के कारण ये कथाएँ और महत्त्वपूर्ण हो जाती हैं। संघर्षों से भरे मानव जीवन का बोध कराती छल, प्रपंच, आडंबर एवं जीवन के कटु सत्यों से परिचित कराती मनोविनोदार्थ कही गई कथाएँ मूर्खों को उनकी मूर्खता, वंचकों को उनके वाक्-छल एवं शोषकों को उनके शोषण का बोध ही

नहीं कराती हैं, अपितु प्रलोभनों को नकारते हुए प्रतिरोध के लिए छात्र-छात्राओं को सजग भी करती हैं। छोटे व स्पष्ट वाक्य बिम्ब, जीवन्त शब्द, ग्राह्य भाषा-कथा को गति ही नहीं ऊर्जा भी प्रदान करते हैं।"15

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-चार की 'साक्षी भव' बोधकथा में राजदरबार में राजा ने कुछ अन्धों को हाथी के पास भेजकर हाथी के बारे में बताने के लिए कहता है सभी उसे स्पर्श करके बताना शुरू करते हैं– जिसने हाथी का पैर पकड़ा, पैर छुआ, उसने कहा कि हाथी खम्भे के समान होता है। जिसने उसकी पूँछ पकड़ी, उसने कहा कि हाथी लाठी के समान होता है। जिसने उसकी सूँड़ पकड़ ली, कहा कि हाथी अजगर के समान होता है। जिसने उसका सिर पकड़ा, कहा हाथी घड़े के समान होता है। किसी ने उसका कान पकड़ा, कहा हाथी सूप के समान होता है और जिस किसी ने उसकी पीठ छुई, उसने कहा हाथी तो दीवार की तरह होता है। जिसने उसका दाँत पकड़ा, उसने कहा कि हाथी हल की तरह होता है।

हाथी वही है, देखने वाले भिन्न-भिन्न हैं, जो अन्धे हैं। जिसने जिस रूप में उसे देखा, जैसा महसूस किया, उसी तरह अपनी बात रखी। सभी को अगर अलग-अलग देखा जाए, तो कहीं से भी हाथी समग्र रूप से एक्सप्लेन नहीं हो पा रहा है। लेकिन अगर सभी को मिला लिया जाए और महसूस किया जाए तो निश्चित रूप से हाथी एक्सप्लेन हो रहा है, हाथी का वह स्वरूप हमारे सामने आ रहा है कि उसकी पीठ बहुत बड़ी है, मजबूत है, वह दीवार का काम कर सकती है। उसके कान सूप हो सकते हैं। उसके दाँत हल जैसे होते हैं। उसकी पूँछ लाठी के समान मजबूत होती है। उसके पैर मजबूत खम्भे हो सकते हैं।

इस बोधकथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि– "प्रिय विद्यार्थियों, जीवन साक्षी भाव है। यह क्षण जो बीत रहा है, इस समय जो महसूस कर रहे हैं, जो आपकी महसूसना है इस समय की, बिल्कुल सत्य है। जो क्षण आप यहाँ गुजारते हैं, जो समय यहाँ गुजारते हैं, जिन परिस्थितियों में यहाँ जीते हैं, उन्हें आप साक्षी भाव से आत्मसात् कर लें। जैसे मैंने अभी कहा महसूस करने वाली बात, महसूसना, जो चीजें आपके सामने जैसे घटती हैं, आप उनकी फीलिंग वैसे ही करें, आप उन्हें आत्मसात् करें, उन्हें अपने जीवन में उतारें, तो समझें कि आप अपने लक्ष्य तक निश्चित ही पहुँचे हुए हैं।

आपको अपने लक्ष्य तक हर हाल में पहुँचना है। पहुँचने के प्रोसेस में आप हैं। लेकिन उसके लिए आपको चीजों को समेटना होगा, अपनी उन चीजों को जो आपको ईश्वर ने दी है, उनका समुचित उपयोग करना होगा। जो भी ऑर्गन्स हैं, उन्हें खोलकर रखिए, उनका समुचित उपयोग कीजिए। जो बातें बताई जाती है, उन्हें उसी मूल रूप में ग्रहण कीजिए, आत्मसात् कीजिए।"16

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-पाँच की 'कर्म प्रधान...' बोधकथा में शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि– "प्रिय विद्यार्थियों, यह मनुष्य ही है जिसके पास दुःख, तकलीफ, कष्ट, कठिनाइयाँ और अवसर हैं, बाकी किसी और के पास नहीं हैं। अगर आप अपने को मनुष्य समझते हैं, इस भूमि में आपका जन्म हुआ है, तो निश्चित रूप से आप वह सब कर सकते हैं। इसे आप सोचेंगे और करेंगे, क्योंकि इसीलिए आपका यहाँ आना हुआ है। आप अपना महत्व समझें, अपना कर्म समझें और उसे पूरा करने का जो अवसर है उसके प्रति समर्पित हो जायें, निश्चित कल आप अपने लक्ष्य पर होंगे।"17

'विद्यार्थियों से...' खण्ड-छः की 'कोल्हू का बैल' बोधकथा में शिव नारायण सिंह जी कहते हैं कि– "प्रिय विद्यार्थियों, जरा सोचो, अगर आपके साथ भी वही हो तो इसे क्या कहा जाय ? जीवन वृत्ताकार नहीं है इसे तो फैलाव चाहिए, इसे तो विस्तार चाहिए। जिसने जीवन को विस्तार दिया समझो उसका जीवन सार्थक है। जिसने उसे संकीर्णता दी फिर कुछ कहने की जरूरत नहीं है। उसका वही हाल होगा जो कोल्हू के बैल का है, उसी वृत्ताकार परिपथ में घूमते-घूमते जीवन समाप्त हो जायेगा। जीवन को विस्तार देना होगा, जीवन में आनेवाली प्रत्येक घटना, क्रिया-प्रतिक्रिया, स्थिति-परिस्थिति को सहर्ष स्वीकार कर उसे अपने उद्देश्य की दिशा में अग्रसारित करना ही जीवन लक्ष्य होना चाहिए। यदि आप ऐसा कर रहे हैं, तो निश्चित ही आप अपने लक्ष्य की ओर बढ़ रहे हैं।"18

निष्कर्ष – इस प्रकार हम देखते हैं कि बोधकथाएँ वर्तमान समय में भी अति प्रासंगिक हैं। क्योंकि वे मनुष्य के मन की जटिलताओं को समझकर, मोह, लोभ और तृष्णा को त्यागकर एक शान्त, नैतिक, सार्थक और सफल जीवन जीने की प्रेरणा देती हैं। वे

जीवन में आने वाली कठिनाइयों का सामना करने के लिए मानसिक दृढ़ता, करुणा और जागरूकता विकसित करने का मार्ग दिखाती हैं।

अन्ततः हम कह सकते हैं कि शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में जीवन की अनुपम अभिव्यक्ति हुई है। जिसे प्रस्तुत करने में इन्हें पूर्ण सफलता मिली है। जो अपने उद्देश्य को सफल एवं सार्थक सिद्ध करके जनमानस की कठिनाइयों को दूर करने के लिए प्रयत्नशील हैं।

सन्दर्भ सूची-

1. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 01, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 20
2. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 01, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 67
3. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या -65
4. सिंह विजय बहादुर - उपन्यास समय और संवेदना, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या – 19
5. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या -71
6. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या -71
7. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 115
8. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 146
9. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 282
10. डॉ. गणपति चन्द्र गुप्त, हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2007, पृष्ठ संख्या – 318
11. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 03, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 31
12. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 03, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 219
13. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 04, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 77
14. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 163 – 164
15. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 211
16. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 04, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 311
17. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 379
18. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 629

वर्ष: 2026 | वॉल्यूम: 02 | अंक: 03 | कुल अंक: 04

भारतीय कथा-परम्परा की जड़ों को मजबूत करतीं शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ

अरुणा कुमारी
शोधार्थी
बोधकथा शोध संस्थान
शिवलोक, गोरखपुर उ.प्र.

प्रस्तावना —भारतीय कथा परम्परा अत्यन्त प्राचीन और समृद्धशाली रही है। यह कथा परम्परा वेदों, उपनिषदों, रामायण, महाभारत और पुराणों से प्रवाहित होकर आज के आधुनिक साहित्य तक विद्यमान है। यह परम्परा ज्ञान, नीति, नैतिकता, मानवीयता को रोचक बोधकथाओं के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित करती रहती है। इसके अन्तर्गत लोक जीवन, लोक संस्कृति और लोक गाथाएँ प्रमुख हैं।

भारतीय साहित्य में गद्य साहित्य, कथा साहित्य और आख्यान साहित्य का विस्तृत वर्णन मिलता है, जो सामाजिक टिप्पणी और मानवीय भावनाओं पर आधारित हैं। यह कथा परम्परा केवल मनोरंजन ही नहीं करती है, बल्कि यह तत्कालीन और भावी पीढ़ियों के बीच सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों के सेतु का निर्माण करती है। इसके साथ-ही-साथ यह ईमानदारी, करुणा और ज्ञान के मूल्यों को बनाए रखने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देती है।

मनुष्य ने जिस क्षण इस धरती पर पहली बार पाँव रखा होगा, कदाचित् उसी समय से कहानी का प्रचलन भी हमारे यहाँ हुआ होगा। ऋग्वेद विश्व-साहित्य का प्राचीनतम ग्रन्थ है, जिसकी रचना ईसा से कुछ हजार वर्ष पहले ही हो चुकी थी। ऋग्वेद में अनेक स्थलों पर तत्कालीन समाज में कही जाने वाली कथाएँ या किस्सागोई की लोकप्रियता और एक प्रचलित विधा होने के प्रमाण मिलते हैं।

प्रस्तुत शोध आलेख में दर्शाया गया है कि शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ भारतीय कथा-परम्परा की जड़ों को मजबूती प्रदान कर रही हैं। इनकी किस्सागोई वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल के किस्से धरातल पर मानवीय संवेदना, नैतिकता और रचनात्मकता को आत्मसात् करती हुई दिखाई देती है।

बीज–शब्द– ऋग्वेद, महाभारत, रामायण, पुराण, हस्तान्तरित, कथा- साहित्य, लोकगाथाएँ, विश्व साहित्य, सार्वभौमिक नैतिकता, अन्तर्निहित

शोध आलेख– बोधकथाएँ सामाजिक- नैतिक दक्षताओं, जैसे परिप्रेक्ष्य- ग्रहण, सहानुभूति और प्रासंगिक नैतिक निर्णयों को विकसित करने के लिए एक विश्वासात्मक सन्दर्भ प्रस्तुत करती हैं। ये कथाएँ एक प्रकार के अनुकरण को निर्मित करती हैं, जो बच्चों और पाठकों को काल्पनिक पात्रों से जुड़ने और उनके दृष्टिकोण को जीवन्त आत्मीयता के साथ समझने को सक्षम बनाती हैं।

शिव नारायण सिंह जी ने अपनी बोधकथाओं के माध्यम से बच्चों में सार्वभौमिक नैतिकता का विकास किया है, जिससे आज के समाज में गिरते मूल्यों के नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सके। उनमें अन्तर्निहित सकारात्मक दृष्टिकोण की मान्यताओं को पहचान सकें।

डॉ. जगदीश जैन लोककथाओं पर काम करने वाले देश के अधिकारी विद्वान एवं इतिहासविद रहे हैं। लोककथाओं पर उनकी दो संपादित पुस्तक बहुत लोकप्रिय रही हैं – एक हज़ार वर्ष पुरानी बोधकथाएँ' और दूसरा, 'प्राचीन भारत की श्रेष्ठ बोधकथाएँ'। 'दो हज़ार वर्ष पुरानी बोधकथाएँ' पुस्तक की महत्ता का अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि उसकी भूमिका हिन्दी के अत्यन्त सम्मानित इतिहासकार एवं कथाकार आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखी है। इस पुस्तक के फ्लैप पर पुस्तक के बारे में लिखा गया है, "प्राचीन भारतीय साहित्य लोककथाओं का अक्षय भण्डार है। कथा के माध्यम से जीवन और जगत की सम्पूर्ण जानकारी तथा मानव-

जीवन को उन्नत बनाने की शिक्षा प्राचीन साहित्य की विशेषता रही है। ये इतनी सामर्थ, ऐसी मर्म-छूती, सहज और स्वाभाविक कथा-कहानियाँ हैं कि युगों तक मानव को इनसे प्रेरणा मिलती रही है और आज भी वे अपने सामाजिक सन्दर्भों में उतनी ही सक्षम हैं।"1

उक्त कथन के आलोक में कहना ज़रूरी है कि लोककथाओं की शुरुआत ही हमारे ज्ञान-विज्ञान को सहजतापूर्वक लोक तक पहुँचाने के उद्देश्य से हुई थी। लोक दरअसल जीवन है। वह नदी के प्रवाह के समान होता है, निरन्तर बहता रहता है, अपने आप को हमेशा बदलता रहता है, नवाचारी बनाता रहता है। इसलिए शास्त्र भी लोक को प्रमाण के रूप में इस्तेमाल करता रहता है। लोक और शास्त्र हमेशा एक-दूसरे से लेते-देते रहते हैं।

जब हमारे शास्त्र के रचयिताओं को यह महसूस हुआ कि हमारा लिखा तो थोड़े से लोगों तक सिमटकर रह जाएगा तब शास्त्रों के ज्ञान को उन्होंने रस में बदलने के बारे में सोचा। सोचने के इसी क्रम में जो रास्ता निकलकर आया, वह ज्ञान को लोक तक पहुँचाने की आख्यान शैली थी और वह आख्यान शैली इन्हीं लोक कथाओं के माध्यम से सामने आयीं। प्राचीन काल की जिन लोककथाओं की बात उपर्युक्त पंक्तियों में डॉ. जैन ने की है, उसकी शुरुआत इस तरह से होती है।

स्पष्ट है कि बोधकथा भारत की प्राचीनतम शिक्षण पद्धतियों में से एक है। इन कथाओं के द्वारा प्राचीन काल से इस देश में नीति, भक्ति, धर्म और ज्ञान-विज्ञान को प्रचारित-प्रसारित करते हुए मनुष्य के चरित्र का निर्माण किया जाता रहा है। लोक से जुड़े होने के कारण यह लोकप्रिय और सहज ग्राह्य रही है, लेकिन आधुनिक काल में ज्यों-ज्यों हम अधिक वैज्ञानिक होते गए, त्यों-त्यों बोधकथा जैसी चिरन्तन भारतीय चिन्तन और शिक्षण पद्धतियों से दूर होते गए। नतीजा हुआ कि हम बौद्धिक तो होते गए, पर मनुष्यता बहुत पीछे छूटती गयी। बोधकथा जैसी शिक्षण पद्धतियों के माध्यम से हृदय और बुद्धि का जो समन्वित विकास हो रहा था, वह अवरुद्ध होने लगा। हमारी ऐसी शिक्षण पद्धतियों पर चिन्ता व्यक्त करते हुए राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' ने अपनी अत्यन्त लोकप्रिय कृति 'कुरुक्षेत्र' में उचित ही लिखा था–

किन्तु है बढ़ता गया मष्तिष्क ही निःशेष
छूट कर पीछे गया है रह, हृदय का देश
नर मनाता नित्य नूतन बुद्धि का त्यौहार
प्राण में करते दुःखी हो देवता चीत्कार।"2

यह सच है कि आधुनिक विज्ञान की शिक्षा ने हमारा अकल्पनीय विकास किया है और अपने इस बौद्धिक विकास पर हम इतराते भी रहते हैं; लेकिन इसने हमारी मनुष्यता ही हमसे छीन लिया है, इससे कोई इंकार भी नहीं कर सकता। इसलिए लगातार प्रगति की सीढ़ियों को चढ़ने के बाद भी हम दुःखी और संतप्त हैं। सब कुछ हासिल करने के बावजूद हमें लगता है कि हमारे पास कुछ नहीं है। इसने हमें मनुष्य से मशीन में तब्दील कर दिया है जिससे हमारी संवेदनाएँ मर गयी हैं। फलस्वरूप अब दूसरे के दुःख में दुःखी और दूसरे के सुख में सुखी होना हम भूल गए हैं। तभी जयशंकर प्रसाद ने यह कामना की थी-

औरों को हँसता देखो मनु
हँसो और सुख पाओ।
अपने सुख को विस्तृत कर लो
सब को सुखी बनाओ।।"3

आधुनिक विज्ञान के युग में हमने तरक्की चाहे जितनी कर ली हो, दूसरों के सुख में सुखी रहने की जो हमारी पुरानी परम्परा रही है, वह हमसे बहुत दूर चली गई है। दूसरों के सुख में अब हम ईर्ष्यालु और दुःख में खुशियाँ मनाने जैसी दुःवृत्तियाँ हमारे भीतर विकसित होने लगी। पूरी पृथ्वी को अपना कुटुम्ब मानने वाला देश अब इतना संकुचित और स्वार्थी होता जा रहा है कि अपने परिवार के सदस्यों में भी केवल पति-पत्नी और संतान तक सिमटकर रह गया है। समय-समय पर हम इसके दुष्परिणामों से अवगत भी होते रहते हैं। ऐसे में शिव नारायण सिंह जैसे किस्सागो हमारे भीतर उम्मीद जगाते हैं।

ऐसी ही स्थिति में हमें अपनी इन पुरानी शिक्षण पद्धतियों की आवश्कता बड़ी शिद्दत से महसूस होती है। इसी शिद्दत का सुखद परिणाम है "विद्यार्थियों से..." ग्रन्थमाला और इसके सपने को साकार करने का उपक्रम आज से लगभग तीस वर्ष पूर्व देवरिया स्थित प्रेस्टिज इण्टर कॉलेज के प्रांगण में इसके कथाकार

शिव नारायण सिंह ने की थी। शिव नारायण जी ने जब इसे शुरू किया था तो निश्चय ही इसके मूल में हमारी इस पुरातन और महत्त्वपूर्ण शिक्षण पद्धति की ओर लौटकर इसे आधुनिक और विज्ञान सम्मत बनाना रहा होगा।

इस संकल्प को पूरा करने में लगभग तीस साल से भी अधिक समय से सुप्रसिद्ध किस्सागो शिव नारायण सिंह लगे हुए हैं। बोधकथा को जन-जन तक फ़िर से पहुँचाना और समाज में उसकी पुनर्स्थापना उनके जीवन का लक्ष्य है और उसके लिए सबसे पहला माध्यम जिसे वह बनाते हैं, वे उनके विद्यार्थी हैं। इससे उनकी संकल्पना पूर्णतः ज़ाहिर हो जाती है कि यदि हम देश बदलना चाहते हैं तो इसकी शुरुआत हमें देश के युवाओं से करना चाहिए जो किसी भी देश के भविष्य होते हैं। आज हम जिस आधुनिक और वैज्ञानिक युग में जी रहे हैं, उस युग के हर युवा के चित्त और चरित्र में इन बोधकथाओं के माध्यम से मूल्यों का निर्माण करना उनका सपना है।

कथाएँ मनुष्य के साहित्यिक अभिव्यक्ति की अत्यन्त प्राचीन विधाओं में से एक है। कविता में जो स्थान गीत का है, लगभग वही स्थान गद्य में कथाओं का है। बचपन में हमारा जिस साहित्यिक विधा से सबसे पहले परिचय होता है, उनमें गीत और कथाओं का स्थान सर्वप्रमुख है। हमारे भीतर नैतिक मूल्यों को भरने के लिए जीवन की शुरुआत से ही 'पंचतंत्र', 'हितोपदेश' और दादी- नानी की कहानियाँ हमें सुनाई जाती हैं। जीवन के कठिन क्षणों में ये कहानियाँ हमारी सहायक होती हैं। उचित-अनुचित, सही-गलत और ईमानदार बनने में ये हमारे सहायक सिद्ध होते हैं।

शिव नारायण सिंह जी हिन्दी के महत्त्वपूर्ण कवि-कथाकार और शिक्षाविद हैं। अपने विद्यालय के विद्यार्थियों में नैतिक मूल्य विकसित करने के लिए एक अनोखी पहल करते हुए वे रोज एक प्रेरक कहानी सुनाते आ रहे हैं। ''विद्यार्थियों से...' ग्रन्थमाला के खण्ड-पर-खण्ड उन्हीं बोधकथाओं का संकलन है। उन्होंने अपने दैनिक जीवन की घटनाओं और महत्त्वपूर्ण ग्रंथों का सहारा लेकर विद्यार्थियों के भीतर सकारात्मक ऊर्जा के संचार की महत्त्वपूर्ण और अनोखी पहल इसके माध्यम से की है। इन बोधकथाओं के माध्यम से उनके विद्यार्थी समय, परिश्रम, ईमानदारी, शिष्टाचार, बुद्धि, लोक व्यवहार आदि का महत्त्व समझने में सफल हुए होंगे, यह तो निर्विवाद सत्य है ; साथ ही पुस्तक के पाठक भी इससे पूरी तरह लाभान्वित हो रहे होंगे, इसका पूर्ण विश्वास है।

आज हम जिस समय में जी रहे हैं, उसमें सफलता का एक मात्र पैमाना किसी भी परीक्षा में सफल-असफल होना रह गया है। ऐसे में हम मनुष्य से लगातार मशीन में तब्दील होते चले जा रहे हैं। सफल होने की चाहत में हम लगातार असामाजिक होते चले जा रहे हैं तथा सफलता और सार्थकता के अन्तर को भूलते जा रहे हैं। हमारी शिक्षा व्यवस्था भी प्रायः ऐसी ही है। इससे हमारे भीतर की सारी संवेदनाएँ मरती चली जा रही हैं। ऐसे में शिव नारायण जी जैसे कवि-कथाकार और शिक्षाविद ने हमारे भीतर उम्मीद की लौ जगाई है। जाहिर है, उनसे हमें बड़ी उम्मीदें हैं। उन्हीं उम्मीदों का सुफल है ये बोधकथाएँ, जिसे बड़ी शिद्दत से उन्होंने सृजित किया है।

शिव नारायण सिंह का कथा साहित्य भारतीय कथा-परम्परा की उस सुदीर्घ धारा का सजीव रूप है जो कथा के माध्यम से प्रबोधन की प्राचीन परम्परा को जीवंत रखते हुए आधुनिक विद्यार्थी-मन को सम्बोधित करता है। आज की पीढ़ी हैरी पॉटर जैसे जादुई संसार से सम्मोहित होकर अपनी मूल कथा-परम्परा को भूलती जा रही है, लेकिन शिव नारायण सिंह अपनी बोधकथाओं में इसी परम्परा को पुनर्जीवित करते हैं। उनकी पुस्तक '''विद्यार्थियों से...' ग्रन्थमाला इस कमी को पूरा करने का एक सशक्त प्रयास है। इसमें उन्होंने सूझ-बूझ के उस जीवन-मूल्य को केंद्र में रखा है जो किसी पाठ्यक्रम या टॉपिक में नहीं पढ़ाया जाता, बल्कि जीवन के अनुभव से स्वयं सीखना पड़ता है। जैसा कि नामवर सिंह कहते हैं — “खूब पढ़ो, लेकिन किताबें नहीं, जीवन।” इस संकलन में संकलित कई ऐसी बोधकथाएँ इसके प्रमाण हैं। उदाहरण के तौर पर 'कल कभी नहीं आता', 'मेरा क्या बिगड़ता है', 'सहयोग', 'उपयोगिता' आदि बोधकथाओं को रख सकते हैं। इसमें कई ऐसी बोधकथाएँ हैं जो लोक से शुरू होकर विज्ञान जैसे दुरूह विषय को भी सहजता से विद्यार्थियों को बोधगम्य बनाती हैं। उदाहरण के लिए 'दर्पण' कहानी को लिया जा सकता। पश्चिम के देश 'खेल-खेल में शिक्षा' का जो नारा देते हैं और जिसे आजकल भारत में भी ख़ूब प्रचारित-प्रसारित किया जा

रहा है, उसका बहुत ही उपयुक्त उदाहरण यह बोधकथा है।

इस संकलन में एक अनूठी बोधकथा है 'फ़र्क' शीर्षक से। जीवन में कई बार हमारे सामने ऐसा दृश्य आता है जब किसी काम को करके हमारे ऊपर कोई फ़र्क नहीं पड़ता, लेकिन हम जिसके लिए कर रहे होते हैं, उस पर बहुत फ़र्क पड़ता है। इसलिए काम को करने के नज़रिए में बदलाव की माँग यह बोधकथा करती है। इस बोधकथा के माध्यम से बहुत बड़ा सन्देश देते हैं जब वह विद्यार्थियों को समझाते हुए कहते हैं कि एक आदमी समुद्र के किनारे पड़े बहुत सारी मछलियों में से कुछ को उठाकर समुद्र में फेंक रहा होता है।

उनके ही शब्दों में, "एक दूसरा आदमी जो कुछ दूरी पर खड़ा होकर यह सब देख रहा था, कुछ समझ नहीं पाता। वह पास आता है और उससे पूछता है- तुम क्यों कर रहे हो? तुम्हारे ऐसा करने से क्या फ़र्क पड़ने वाला है? इतना बड़ा समुद्र है, जाने कितनी लम्बाई है इसके तट की, हजारों-हज़ार मछलियाँ इसी तरह लहरों के साथ आती हैं, किनारे पर रह जाती हैं और धूप में मर जाती हैं। तुम्हारे इन दो-चार मछलियों को उठाकर फेंक देने से क्या फ़र्क पड़ने वाला है।

फेंकने वाला कहता है- बात सही है। लेकिन जिस मछली को मैं फेंक रहा हूँ, उसे तो फ़र्क पड़ता है, उसके जीवन की रक्षा तो हो रही है।"4

यहाँ आकर बोधकथा बहुत बड़ी हो जाती है और विद्यार्थियों सह पाठकों में यह सन्देश देने में सफल हो जाती है कि हमें किसी काम को छोटा समझकर, यह सोचकर छोड़ देने से कि मेरे अकेले करने से क्या होगा, पूरी दुनिया तो हमारे जैसा नहीं सोचती, उचित नहीं है। जीवन की हर शुरुआत हमें स्वयं से करना चाहिए चाहे वह छोटा हो या बड़ा। आख़िर बूँद-बूँद से ही तो घड़ा भरता है। गाँधी भी कहते थे कि हम जिसे करना चाहते हैं, जिसे दूसरों के आचरण में देखना चाहते हैं; उसे घटित होते हुए देखने के लिए उसकी शुरुआत हमें स्वयं से करनी चाहिए। कई बार इसका परिणाम हमें उस वक्त समझ में नहीं आता, लेकिन हो रहा होता है और कालान्तर में वह विशाल रूप लेकर हमारे सामने उपस्थित होता है।

ठीक वही बात इस बोधकथा के अन्त में विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए वह कहते हैं, "प्रिय विद्यार्थियों, कहना ही होगा, जो सीधे प्रभावित होता है वह इस दर्द को, कष्ट को, प्रभाव को समझ पाता है। जो प्रभावित नहीं है वह तो कुछ भी कहकर निकल सकता है। एक बूँद पानी, एक छोटा-सा हवा का झोंका, एक छोटा-सा बादल का टुकड़ा, हरियाली का छोटा-सा हिस्सा, एक छोटी-सी चिंगारी, एक छोटा-सा घास का टुकड़ा जिसे आप तृण कहते हैं जिससे चिड़िया अपना घोसला तैयार कर लेती है, ये चीजें भले आपको छोटी लगती हों पर ये चीजें फ़र्क डालती हैं।"5

अन्त में इसे विद्यार्थियों की परीक्षा से जोड़कर यह कहना बहुत संतोषजनक प्रतिफल माना जाएगा कि "इस फ़र्क को सोचकर, इस फ़र्क को समझकर अगर आप ऐसी कोशिश करेंगे कि अपने समक्ष आया एक अवसर भी न चूके तो निश्चित रूप से कल आप शीर्ष पर होंगे, आप अपने उद्देश्य पर होंगे, निश्चित ही आपको आपका लक्ष्य मिलेगा।"6

अधिकार और कर्त्तव्य हमारे जीवन में बहुताधिक सुने जाने वाले शब्द हैं। हम अपने अधिकारों को लेकर तो बहुधा सजग रहते हैं लेकिन, कर्त्तव्य पर हमारा ध्यान नहीं होता। शिव नारायण जी की इच्छा है कि उनके विद्यार्थी कोरे अधिकार की बात करने वाले न हों। वे अपने कर्त्तव्यों को भी ठीक से समझें और अपने जीवन में उनका अनुपालन करें। इस भाव को बोधकथा के माध्यम से बहुत सहज रूप में अपने विद्यार्थियों तक प्रेषित कर लेते हैं। उनकी इसी भाव की बोधकथा है- 'अधिकार और कर्त्तव्य'।

बोधकथा के अन्त में कितना सही-सही वह विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए कहते हैं, "एक अच्छा विद्यार्थी बनने के लिए आपको अपने कर्त्तव्य का बोध होना चाहिए और अगर आपको अपने कर्त्तव्य का बोध हो जाएगा तो अधिकार तो आपको मिला हुआ ही है। आप जैसे चाहेंगे, जिस रूप में चाहेंगे, आपको अधिकार का लाभ देने के लिए हमलोग यहाँ हैं ही। यही तो हमलोगों का काम है कि आपको कर्त्तव्य का बोध कराया जाए, आपको कर्त्तव्य के रास्ते पर लाया जाए और आपके अधिकार आपको सुपुर्द कर दिये जायें।"7

कहना न होगा कि आज की हमारी शिक्षण पद्धति विद्यार्थियों में उनके अधिकारों को जागृत तो

कर रही है पर उनके कर्त्तव्यों की सीख देने में असफल है। तभी तो देश के बड़े-बड़े संस्थानों से पढ़कर निकलने वाले विद्यार्थी अपने लक्ष्य को पाने में तो सफल हो जा रहे हैं लेकिन जीवन को सार्थक नहीं बना पाते। बहुत दुःख के साथ कहना पड़ेगा कि हमारे देश के कई बड़े संस्थान (कथित तौर पर) भ्रष्ट ब्यूरोक्रेट पैदा कर रहे हैं। विद्यालयी और विश्वविद्यालयी परीक्षा में वे अव्वल तो हो रहे हैं, पर जीवन की परीक्षा में, व्यावहारिक परीक्षा में फेल हो जा रहे हैं।

अतः ज़रूरत है अधिकारों के साथ-कर्त्तव्यों के पाठ का और यह बोधकथा उनके भीतर यह भाव भरने में पूरी तरह से सफल है। शिव नारायण जी की ऐसी बोधकथाएँ विद्यार्थियों के भीतर बुद्धिमता, दक्षता, योग्यता, कर्मठता, लगन आदि का ही भाव केवल नहीं भरतीं, बल्कि उनके भीतर कर्त्तव्यबोध का भाव भी विकसित करती हैं। बोधकथा के पात्र जापानी अधिकारी की चर्चा करते हुए बहुत उचित कहते हैं कि "मेरा मानना है कि जिस दिन वैसी सोच आपकी भी हो जाएगी, उसी दिन आप इस राष्ट्र के कर्णधार बनने का गौरव प्राप्त कर सकेंगे।"8

'बाणभट्ट की आत्मकथा' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की सर्वोत्कृष्ट कृति मानी जाती है, बल्कि यूँ कहिये कि हिन्दी की सर्वोत्कृष्ट कृतियों में से एक है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इसकी रचना उन्नीस सौ छियालिस में विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर की पुण्यभूमि शान्तिनिकेतन, विश्वभारती में रहते हुए की थी। इसमें उन्होंने आज़ाद हिन्दुस्तान के भारतीयों के चरित्रों में आ रहे पतन और उनके कारण की बड़ी सटीक पहचान की है। बड़े सत्य और छोटे सत्य के बहाने हमारी कायरता पर प्रहार किया है जिसमें हम कल के नाम पर आज की समस्याओं के निदान का भाव रख छोड़ते हैं।

हमारे शरीर में रोग आज लक्षित हुआ है और हम कहते हैं कि इसका इलाज कल कर लेंगे। जाहिर है जब परिस्थितियाँ अपना विकराल रूप धरती हैं तो हमारे हाथ-पाँव फूलने लगते हैं। निउनिया भट्ट जैसे समर्थ और शक्तिशाली पात्र के सामने सहज भाव से देश में हो रहे भेद-भाव को रेखांकित करती है तो आचार्य द्विवेदी की कलम भट्ट के माध्यम से जो लिखती है, वह बहुत महत्त्वपूर्ण है। वह लिखते हैं, "उस दिन मैंने पहली बार अनुभव किया कि मनुष्य के सामाजिक सम्बन्धों की जड़ में कहीं बहुत बड़ा दोष रह गया है।"9

कुछ इसी तरह का भाव बोध होता है जब हम शिव नारायण जी की बोधकथा 'कर्त्तव्यबोध' के इस अंश का पाठ करते हैं, "हम कभी विश्व गुरु थे लेकिन आज ज़रूर हम स्लैक हुए हैं, ज़रूर हम कुछ पीछे हुए हैं। मुझे इसका कारण सिर्फ़ यही समझ में आता है कि कहीं-न-कहीं हमारे कर्त्तव्यबोध में कोई कमी आयी है और जिस क्षण हम इसे महसूस कर लेंगे उस क्षण फ़िर वही हो जायेंगे जो कभी थे, जिस नाम से प्रसिद्ध थे, जो हमारी प्रसिद्धि थी।"10

शिव नारायण सिंह का कथा-शिल्प सबसे अनूठा और प्रभावशाली है। वे बोधकथा को एक तरफा उपदेश नहीं बनाते, बल्कि उसे संवाद का रूप देते हैं। पाठक या श्रोता को लगता है कि वह स्वयं बच्चों के साथ उस बातचीत में शामिल है। नाई और शेर की बोधकथा 'दर्पण' इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। नाई शेर को छकाने के लिए दर्पण निकालता है, लेकिन शिव नारायण सिंह सीधे यह नहीं बताते। वे पूछते हैं— "नाई अपना थैला खोलता है, उसमें से क्या निकलता है ?"11

जब बच्चे चुप रह जाते हैं तो फिर से पूछते हैं— नहीं पता तुम्हें ? थैले में से क्या निकलता है ? बच्चे अपनी कल्पना शक्ति से तरह-तरह के उत्तर देते हैं— कोई जादू का कटोरा कहता है। तब उनकी कल्पना को प्रोत्साहित करते हुए वे सही उत्तर निकलवाते हैं— "हाँ, देखो उधर से कोई कुछ कह रहा है हाँ, उसमें से दर्पण निकालता है वह।"12 इस प्रकार वे पाठक को निष्क्रिय श्रोता नहीं, सक्रिय सहभागी बनाते हैं।

कथा का यह शिल्प विज्ञान, दर्शन और नीति-शिक्षा को सहजता से पिरो देता है। नाई के थैले से निकले दर्पण के माध्यम से वे समतल दर्पण, अवतल दर्पण और उत्तल दर्पण की चर्चा करते हैं। उनके दैनिक उपयोग—जुल्फें सँवारना, दाढ़ी बनाना, स्कूटी-गाड़ी चलाना, डॉक्टरों द्वारा प्रयोग—सबको लोककथा के प्रवाह में बुन दिया जाता है।

विज्ञान की यह चर्चा कहीं भी बोझिल नहीं लगती क्योंकि वे कथा का फोकस कभी नहीं भूलते। भौतिकी की व्याख्या के बाद वे तुरन्त पूछते हैं— "नाई ने जिस दर्पण का प्रयोग किया होगा, वह कौन सा दर्पण था ?"13 इस एक प्रश्न से शिल्प टूटने से बच जाता है

और श्रोता और पाठक फिर कथा-प्रवाह में लौट आता है।

लेकिन शिव नारायण सिंह की कथा-यात्रा विज्ञान तक सीमित नहीं रहती। दर्पण के बाहरी उपयोग से वे आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाते हैं। वे विद्यार्थियों से कहते हैं—"मैं जानता हूँ तुम अधूरे होने के लिए नहीं हो, तुम्हारे अन्दर जो छिपा है, जो तुम्हारी सम्भावना है वह क्षण कभी भी आ सकता है।"14

दर्पण के माध्यम से वे विद्यार्थियों को सिखाते हैं कि वे स्वयं अद्वितीय हैं, अपनी सम्भावनाओं से परिचित हों और आत्म-चेतना को विस्तार दें। पूरी पुस्तक 'प्रिय विद्यार्थियो' सम्बोधन से शुरू होती है और बीच-बीच में बार-बार इसी सम्बोधन से विद्यार्थियों को केंद्र में रखती है। कबीर के 'सुनो भाई साधो' की तरह यह सम्बोधन कथा को जीवन्त और व्यक्तिगत बना देता है।

कथा-प्रवाह लोककथा से ज्ञान-खण्ड होते हुए दर्शन के आकाश से गुजरकर नीति-लोक में आकर ठहरता है। वे पारम्परिक शैली में उदाहरण और कथन के युग्म से नीतिपरक सुभाषित रचते हैं। 'दर्पण' रचना के अन्त में वे कहते हैं— "यदि तुम किसी पर कीचड़ फेंकना चाहते हो, तो कीचड़ उस पर पड़े या न पड़े, तुम्हारा हाथ गन्दा हो ही जाएगा। ठीक उसी प्रकार, अगर गुलाब का अर्क फेंकना चाहते हो, तो उसके छींटे उस पर पड़े या न पड़े, तुम्हारा हाथ सुगन्धित हुए बिना नहीं रह सकता।"15 तुलसी, रहीम और संस्कृत सुभाषितों की परम्परा को वे आधुनिक सन्दर्भ में जीवन्त रखते हैं।

'गुरु कुम्हार सिस कुम्भ है' समीक्षात्मक लेख में डॉ. जय प्रकाश धूमकेतु कहते हैं– "श्री सिंह की प्रयोग-धर्मिता विज्ञान की प्रयोगशाला से निकलकर शिक्षा व समाज की प्रयोगशाला में अपनी वैज्ञानिक दृष्टि संपन्नता का परिचय देने को तत्पर है। 'गुरु कुम्हार सिस कुम्भ है' की उक्ति को सार्थक बनाने की संकल्पबद्धता शिव नारायण सिंह की नियति बन चुकी है। वह संस्था और उस संस्था के सभी सदस्य सौभाग्यशाली हैं, जिस संस्था के मुखिया शिव नारायण सिंह हैं। मनसा, वाचा, कर्मणा से समेकित।

प्रतिदिन शिक्षा ग्रहण करने के लिए जानेवाले विद्यार्थी प्रार्थना- सभा के समय जीवन मूल्यों को सहेजने और अपने को संस्कारित करने के साथ 'ज्ञान कऽजोति जरै दिन राती' की संकल्पबद्धता के साथ स्वस्थ वातावरण में ज्ञान अर्जित करते हैं। परिसर के वातावरण का सृजन शिव नारायण सिंह के जीवन की सार्थकता है। शायद बेहतर मनुष्य और बेहतर दुनिया का सृजन उनका सपना है।"16

शिव नारायण सिंह का अंतिम लक्ष्य कल्याणकारी है। वे जैसे ही 'शिवोऽहम्— अर्थात् मैं कल्याणकारी हूँ कहते तब तक उनके विद्यार्थी तेज स्वर में इसकी पुनरावृत्ति कर उस दिन की बोधकथा का समापन करते हैं। विद्यार्थियों को वे सृष्टि का विलक्षण और अद्वितीय अंश मानते हैं। उनकी कथा-रचना का उद्देश्य विद्यार्थियों का रूपान्तरण है ताकि वे बड़े उद्देश्य बड़ी सोच के साथ समाज और सृष्टि के कल्याण—की ओर अग्रसर हों। वे जानते हैं कि मानव-सभ्यता ने अपार ज्ञान-राशि एकत्र की है। उसमें से मधु एकत्र कर, अपनी कल्याणकारी दृष्टि से अनूठा रूप देकर प्रस्तुत करना ही उनका कार्य है। इसीलिए अपनी प्रत्येक बोधकथा के अन्त में वे नम्रतापूर्वक 'धन्यवाद' कहना नहीं भूलते।

किसी भी मनुष्य के सुखी जीवन के लिए यह ज़रूरी है कि वह जीवन में लोक- व्यवहार, आत्मविश्वास, दृढ़ संकल्प, संपन्नता, मित्रता, बुद्धि आदि सद्गुणों का सही प्रयोग करे। 'विद्यार्थियों से...' ग्रन्थमाला के सृजनकर्त्ता ने इस कौशल को बड़ी कुशलता से इसमें उकेरा है। आशा है कि यह 'विद्यार्थियों से...' ग्रन्थमाला आने वाले दिनों में हिन्दी समाज के लिए आधुनिक पंचतंत्र सिद्ध होगी।

निष्कर्ष– निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि शिव नारायण सिंह का कथा साहित्य केवल बोधकथाएँ नहीं, बल्कि एक सम्पूर्ण प्रबोधन-यात्रा है। लोककथा की सरलता, विज्ञान की स्पष्टता, दर्शन की गहराई और नीति की प्रासंगिकता को एक सूत्र में पिरोकर उन्होंने विद्यार्थी-मन को आकर्षित करने का दुर्लभ कार्य किया है। उनकी बोधकथाएँ श्रोता और पाठक को न केवल मनोरंजन देती हैं, बल्कि उसे आत्म-चिन्तन, आत्म-विश्वास और कल्याण की दिशा में प्रेरित करती हैं। आज के समय में जब जादुई बोधकथाएँ विदेशी स्रोतों से आ रही हैं, तब शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ भारतीय कथा-परम्परा की जड़ों को मजबूत करती हुई भविष्य के निर्माण का मार्ग प्रशस्त करती हैं।

सन्दर्भ सूची –

1. डॉ. जगदीशचंद्र जैन, दो हज़ार वर्ष पुरानी बोधकथाएँ, वाणी प्रकाशन ग्रुप, नई दिल्ली, पेपरबैक ग्यारहवाँ संस्करण- 2024, पुस्तक के फ्लैप से
2. रामधारी सिंह दिनकर, कुरुक्षेत्र, षष्ठम् सर्ग, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली,सन् 1975, पृष्ठ संख्या - 82
3. जयशंकर प्रसाद, कामायनी, कर्म सर्ग, हिन्द पॉकेट बुक्स लिमिटेड, दिल्ली, संस्करण 1988, पृष्ठ संख्या - 63
4. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 28 – 29
5. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 30
6. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 30
7. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 33
8. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 62
9. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, बाणभट्ट की आत्मकथा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–68
10. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 63
11. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 07, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 586
12. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 07, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 586
13. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 07, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 591
14. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 07, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 591
15. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 07, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 592
16. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 46

वर्ष: 2026 | वॉल्यूम: 02 | अंक: 03 | कुल अंक: 04

ग्रामीण जीवन का वैभव और शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ

सपना सिंह
शोधार्थी
बोधकथा शोध संस्थान
शिवलोक, गोरखपुर उ.प्र.

शोध-सारांश – भारत मुख्यतः गाँवों का देश है, देश में ग्रामीण जनसमुदाय भारतीय समाज का केन्द्र बिन्दु है और यह वास्तविक भारत का प्रतिनिधित्व भी करता है। भारतीयों का ग्रामीण जीवन अपने भीतर विलक्षण जीवन्तता लिए होता है, यही इस जीवन को वैभवपूर्ण बनाता है। समकालीन कहानीकारों ने गाँवों के इन्हीं मूल्यों को आधार बनाकर महत्त्वपूर्ण कहानियाँ लिखी हैं। प्रेस्टिज इण्टर कॉलेज देवरिया के प्राचार्य शिव नारायण सिंह जी इनमें अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। उनकी बोधकथाओं में ग्रामीण जीवन का विलक्षण वैभव स्पष्ट दिखाई देता है। वह ग्रामीण जीवन के चिरन्तन मूल्यों से लेकर संघर्ष व उससे मिलने वाली जीवटता तक का जिक्र अपनी बोधकथाओं में करना नहीं भूलते। इस सन्दर्भ में शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ ग्रामीण फलक पर सर्वस्पर्शी दिखाई पड़ती हैं।

प्रस्तुत शोधपत्र के माध्यम से हम हिन्दी बोधकथाओं में ग्रामीण जीवन के चित्रण की चर्चा करते हुए शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में ग्रामीण जीवन के चित्रण की व्याख्या करने का प्रयास करेंगे तथा शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में व्याप्त ग्रामीण जीवन के मूल्यबोध व वैभव को भी समझने का प्रयास करेंगे।

बीज-शब्द– ग्रामीण, सरलता, सहजता, बोधकथा, ध्येय, नैतिक, जीवन, व्यवस्था

गाँव भारतीय सभ्यता का आधार है। वैदिक काल से लेकर अब तक गाँव परम्परा, संस्कृति, मूल्य व्यवस्था, अर्थव्यवस्था का स्रोत रहा है। अंग्रेजों के आगमन और आधुनिक प्रौद्योगिकी ने गाँव को उतना नहीं बदला है जितना कि शहरों को बदला है। इसलिए जब यह कहा जाता है कि भारत की आत्मा गाँव में बसती है तो यह अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं जान पड़ता।

ग्रामीण जीवन की अवधारणा समय के साथ बदलती रही है। इस बदलाव के बावजूद भी गाँव की अपनी विशिष्ट पहचान धूमिल नहीं हुई है बल्कि गाँव की छवि अभी भी सुरक्षित है। भूमण्डलीकरण और मुक्त बाजार के दौर में भी ग्रामीण जीवन ने सभ्यता का मार्गदर्शन किया है। ग्रामीण जीवन की समाजशास्त्रीय, कृषि वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञों और साहित्यकारों ने अपनी-अपनी दृष्टि से ग्रामीण जीवन को परिभाषित किया है। गाँव की अवधारणा को किसी एक अनुशासन की परिभाषा में बाँधा नहीं जा सकता है। अपनी बहुआयामी एवं बहुस्पर्शी चरित्र के कारण ग्रामीण जीवन की अवधारणा प्रसांगिक रही है।

हिन्दी कथा साहित्य में ग्रामीण जीवन को लेकर कई कहानियाँ रची गई। इन बोधकथाओं के द्वारा ग्रामीण जीवन परम्परा का पता चलता है। दरअसल कहानी की शुरुआत भी कविता और नाटक की तरह लोक- कला से हुई। इसे किस्सागोई की परम्परा से सम्बन्धित मानते हैं। आज भी ग्रामीण जीवन में किस्सागोई की परम्परा मौजूद है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि प्रेस्टिज इण्टर कॉलेज के प्राचार्य शिव नारायण सिंह जी भी मूलतः एक किस्सागो ही हैं, उनका यही गुण उनकी रचनाओं को विशिष्ट बनाता है।

किस्सागोई में प्रायः वैसे कथ्य होते हैं जिसमें कल्पना की उड़ान ज्यादा होती है और उसी से आनन्दित भी होते हैं। इसके विस्तार फलक को नामवर सिंह ने 'कहानी और फैंटेसी' में कहानी को कल्पना से जोड़कर देखने का प्रयास किया है। नामवर सिंह का मानना है कि "वैसे भी कहानी के साथ अनेक प्रकार की कलाएँ दिखाती हैं। कभी वर्षों को समेटकर एक क्षण में बाँध देती है, कभी क्षण को खोलकर वर्षों में फैला देती है, कभी समय के दायरे को तोड़ती है, कभी टुकड़ों को जोड़कर एक दायरा बनाती है। कहानी का

एक वाक्य एक राजा था... शुरू हुआ कि नहीं यह एक 'था' मन को उठाकर जाने कहाँ कितनी दूर लेकर उड़ जाता है। कहानी बिना पर के उड़ती है और शुरू-शुरू में इसी गुण के कारण हमें पंसद आती है।"1

फ्रैंक ओ कोन्नोर ने कहानी की विशेषता बताते हुए कहा कि कहानी, कविता और नाटक की अपेक्षा अपनी रूचि के अच्छे तरीके प्रस्तुत करती है। फ्रैंक ओ कोन्नोर के मत में- "प्रारम्भिक दौर में कविता और नाटक की तरह कहानी भी एक लोक- कला थी, हालांकि अपनी सीधी- सादी तकनीक के कारण कविता और नाटक की तुलना में यह महत्त्वपूर्ण नहीं थी। लेकिन उपन्यास की भाँति कहानी भी एक आधुनिक कला के रूप में विद्यमान है, अर्थात् जीवन के प्रति हमारे निजी रुझान को यह कविता और नाटक की अपेक्षा अधिक अच्छे ढंग से पेश करती है।"2

कहानी अपने रूप में एक वैसी विद्या है जो किसी एक भाव या घटनाओं को प्रस्तुत करता है। इसको परिभाषित करते हुए प्रेमचंद ने लिखा है- "कहानी एक ऐसी रचना है जिसमें जीवन के किसी एक अंग या किसी एक मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है। उसके चरित्र, उसकी शैली, उसका कथा-विन्यास सभी एक भाव को पुष्ट करते हैं।"3

इसके आगे प्रेमचंद कहानी की तुलना उपन्यास से करते हुए लिखते हैं कि "उपन्यास की भाँति कहानी में मानव का एक सम्पूर्ण वृहत् रूप दिखाने का प्रयास नहीं किया जाता न उसमें उपन्यास की भाँति सभी रसों का मिश्रण होता है, वह ऐसा रमणीय उद्यान नहीं जिसमें भाँति-भाँति के फूल, बेल-बूटे सजे हुए हैं, बल्कि वह एक गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में दृष्टिगोचर होता है।"4

उपन्यास जहाँ जीवन की सम्पूर्णता से लेखक का सरोकार है वहाँ कहानी के कोई एक भाव, घटना या चरित्र का कोई मार्मिक प्रसंग होता है। जे. वर्ग इसेंविन ने कहानी को परिभाषित करते हुए इस बात को स्वीकार किया है कि कहानी एक प्रधान घटना एवं एक कथा वस्तु का सूक्ष्म संगठित रूप होता है जो कि पाठकों पर एक निश्चित प्रभाव छोड़ता है। जे. वर्ग इसेंविन के विचार इस प्रकार है- "कहानी एक संक्षिप्त कसावपूर्ण कल्पना प्रसूत विवरण है जिसमें एक घटना होती है और एक प्रमुख पात्र होता है। इसमें एक कथावस्तु होती हैं जिसका विवरण इतना सूक्ष्म तथा निरूपण इतना संगठित होता है कि वह पाठकों पर एक निश्चित प्रभाव छोड़ता है।"5

इस तरह कहानी की कई विशिष्टताएँ उभर कर समाने आती है जिसमें एक प्रधान घटना, एक प्रमुख चरित्र, कल्पना, कथावस्तु कसाव, पाठकों पर प्रभाव डालने में समर्थ है।

हिन्दी साहित्य में सामान्यतः मूल रूप से 'ग्रामीण कहानी' और 'आंचलिक कहानी' का आरम्भ स्वतंत्रता के बाद से माना जाता है। इस सम्बन्ध में विद्वान श्यामसुन्दर के अनुसार- "विविध शब्द कोशों में 'ग्रामीण' का अर्थ देहाती 'गाँव' में रहने वाला, गाँव सम्बन्धी आदि है तथा इनसे जुड़ी कहानियाँ भी ग्रामीण अंचल की हैं।"6

ग्रामीण बोधकथाओं में ग्रामीण जीवन के विभिन्न अंगों का चित्रण होता है। 'ग्रामीण-जीवन' की अनुभूति ही ग्रामीण बोधकथाओं में अभिव्यक्त होती है, जिसमें गाँव की जीवन पद्धति, वहाँ की प्रथाएँ, वहाँ की स्वच्छ प्रकृति, वहाँ की परम्परा और संस्कृति, प्रादेशिक विशेषताएँ भौगोलिक विशेष के अनुसार धार्मिक और उससे जुड़ी विभिन्न समस्याएँ आदि ग्रामीण कहानी में समाहित होती हैं।आलोचक आनन्द यादव के अनुसार "अनेक पहलुओं से ग्रामीणत्व उभर आता है और जब अनुभूति के अनिवार्य अंग के रूप में ही 'ग्रामीणता' कहानी में प्रतिबिम्बित होती हैं तब वह कहानी ग्रामीण कहानी बनती है।"7

इस प्रकार लोकगीत, लोकभाषा, वेश-भूषा, आस्थाएँ, परम्पराएँ और सांस्कृतिक मर्यादाएँ, आदि बातों के माध्यम से ग्रामीण कहानी पर ग्रामीण परिवेश का प्रभाव दिखाई पड़ता है, 'ग्रामीण कहानी' की विशेषता और उसके अर्थ को सामने लाने के लिए उसकी सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक और सांस्कृतिक मान्यताओं को सर्वप्रथम जानना अति आवश्यक है। शिव नारायण सिंह जी की विशेषता इन सभी विषयों को लेकर उनका सहज ज्ञान ही है। इसी व्यावहारिक विशेषज्ञता के कारण शिव नारायण सिंह के कथा साहित्य में ग्रामीण जीवन का अद्‌भुत वैभव हमें देखने को मिलता है, जिसकी चर्चा यहाँ यथेष्ठ है।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में ग्रामीण जीवन– पीछे चर्चा हो ही चुकी है कि, शिव नारायण

सिंह मूल रूप से एक किस्सागो हैं, किस्सागोई की यह शैली उनकी बोधकथाओं को एक अतिरिक्त प्रासंगिकता देने का कार्य करती है। शिव नारायण सिंह भारतीय ग्रामांचल के एक जीवन्त नागरिक भी हैं, इस नाते उनकी बोधकथाओं में यत्र- तत्र- सर्वत्र यह ग्रामांचल बिखरा हुआ है और बिखरा हुआ है इस ग्रामांचल का वैभव।

शिव नारायण सिंह अपनी कथाओं में वास्तविक जीवनानुभवों का भी प्रयोग कर ग्रामीण जीवन की सहजता सरलता का परिचय देने का कार्य करते हैं, उदाहरण के लिए 'कुटिल' बोधकथा में वह कहते हैं:- "प्रिय विद्यार्थियों, आज की कथा वार्ता उन दिनों की है, जब मैं अपने गाँव से, मेरा गाँव कहाँ है ? भटनी। भटनी से देवरिया ट्रेन से आया जाया करता था। प्रतिदिन टिकट खरीदिए या फिर एम.एस.टी. बनवा लें, स्वाभाविक है एम.एस.टी. बेहतर विकल्प है। एम.एस.टी. मतलव मंथली सीजनल टिकट। वैसे ही इस धरती पर लाइन लगाने की परम्परा अपरिहार्य हो गई है। अब इस परम्परा में जाने कितने लोग अपना बहुमूल्य समय नष्ट कर देते हैं। इसका विकल्प भी क्या है ? और है तो सभी की पहुँच में कहाँ।

वैसे तो हम लोग लोकल ट्रेन पकड़ने के लिए आते। किन्तु बहुधा कोई-न-कोई एक्सप्रेस ट्रेन मिल जाती और अगला स्टॉपेज देवरिया सदर होता। इस बीच प्रतिदिन कोई न कोई अजूबा, कुछ-न-कुछ नया देखने, सुनने और सीखने को मिलता।

ऐसे ही एक दिन मैं और मेरे सहयात्री अर्थात् जो प्रतिदिन भटनी से देवरिया और देवरिया से भटनी आया जाया करते। उनका अपना उद्देश्य होता मेरा अपना उद्देश्य। मेरे उद्देश्य से आप परिचित है। उन दिनों मैं बी.आर.डी.पी.जी. कालेज में बी.एड. की पढ़ाई कर रहा था।

उस दिन वह एक्सप्रेस ट्रेन थी। ट्रेन खुलती तब तक दो व्यक्ति हमारे ही कंपार्टमेंट में आये जो पसीने से तरबतर थे। एक बात बता दूँ, उन दिनों या आज भी जो लोग प्लेटफार्म पर टहलते रहते हैं और ट्रेन खुलने का इंतजार करते हैं। वे देखते रहते हैं कि टी.टी.ई. किस कंपार्टमेंट में चढ़ते हैं। उनसे एक- दो कंपार्टमेंट छोड़कर ट्रेन में चढ़ते। ताकि टी.टी.ई. को उन तक पहुँचते-पहुँचते दूसरा स्टेशन आ जाये। हालाँकि सभी डिब्बे एक-दूसरे से कनेक्ट होते हैं। कुछ अन्य लोग भी चढ़े जो हमारे ही कंपार्टमेंट में आकर बैठ गए।"8

आगे इसी बोधकथा में शिव नारायण सिंह ग्रामीण जीवन की सहजता और आधुनिक जीवन के खोखलेपन की टीस लिए कहते हैं। "उन दिनों अभी सभ्यता थोड़ी शेष थी। आज का जमाना होता तो सभी अपने-अपने मोबाइल में व्यस्त। कौन आया, कौन गया, कौन बैठा, कौन खड़ा है ? इससे क्या मतलब ? एक दूसरे से सौहार्द पूर्व शिष्टाचार वार्ता प्रारम्भ हुई। पहले से बैठे दोनों व्यक्तियों में से एक ने बाद में आए व्यक्तियों से कहा- जान निकल गई। लाइन में लगे लगे, तब जाकर दो टिकट मिल पाया।"9

शिव नारायण सिंह अपनी बोधकथाओं में ग्रामीण जीवन की सहजता के साथ-साथ, संघर्ष का चित्रण करना भी नहीं भूलते। उनकी कथा की एक विशेषता यह भी है कि वह सिक्के का सिर्फ एक ही पहलू दिखाकर श्रोता एवं पाठक को प्रसन्न नहीं कर देना चाहते वह उसे चिंतन की गहराइयों में भी उतार लाते हैं। उदाहरण के लिए 'अप्प दीपो भव' कहानी में वह चिकित्सा आदि व्यक्तिगत आवश्यकताओं के प्रति ग्रामीण व्यक्ति के अभावजनित संकोच तथा अज्ञान को दिखाते हुए कहते हैं– "प्रिय विद्यार्थियों, आज की बात है पुरानी लेकिन सत्य घटना है और मेरे बहुत करीब के रिश्तेदार की है। घटना इस प्रकार है, उस घर के मुखिया उम्र के इस दौर में अन्धे हो चले हैं। आप जानते ही हैं कि जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है, एक स्टेज आता है जब आँखों की रोशनी घटते-घटते एकदम समाप्त हो जाती है।

ऐसा ही कुछ उनके साथ भी था, जब थोड़ा-बहुत दिखायी देता था, उनका काम चल जाता था तो उन्होंने ध्यान नहीं दिया। जब उम्र अधिक हो गयी है तो उन्हें बिल्कुल नहीं दिखायी दे रहा है। इस अन्धेपन का कारण भी है। आँख में कौन-सी बीमारी होती है ? मोतियाबिन्द । तो उनकी आँख में मोतियाबिन्द हो गया है। सभी घरवाले उन्हें समझाते हैं। उनके हित-मित्र समझाते हैं। उनके दोस्त कुछ डाक्टर भी हैं। वे भी समझाते हैं कि आप इसका इलाज करा लीजिए, आप इसका आपरेशन करा लीजिए, आपका मोतियाबिन्द पक गया है, निकाल दिया जायेगा फिर आँख की रोशनी लौट आयेगी। आप सब कुछ ठीक-ठीक देख लेंगे। आपकी आँख सही हो जायेगी। वे मानते नहीं हैं।

मैंने कहा आपसे, वे मानते नहीं हैं। उनका

कहना है कि अब इस इलाज का क्या फायदा, मैंने तो पूरे जीवन में कभी एक टेबलेट भी नहीं खायी है। दवाई के नाम पर मैंने ऐसा कुछ भी नहीं खाया। मुझे कभी सर्दी नहीं हुई, मुझे कभी बुखार नहीं हुआ, मुझे कभी किसी तरह की कोई बीमारी नहीं हुई और जब मेरी उम्र पूरी हो गयी है, जब जीवन के मुश्किल से कुछ वर्ष रह गये हैं, तो फिर इस चीर-फाड़ का क्या मतलब, इस चीर-फाड़ की क्या जरूरत है ?

वैसे भी मुझे कमी किस बात की है जो मैं इस सांसत में पड़ूँ । मैं अन्धा ही सही, मुझे कुछ दिखाई नहीं पड़ता है लेकिन ऐसा भी नहीं है जिससे मेरा कोई काम रूका हो। मेरे सारे कार्य सकुशल सम्पन्न हो रहे हैं। मैं सुखी हूँ, मैं प्रसन्न हूँ, मुझे किसी तरह की कोई दिक्कत नहीं है। आप ही बताइये कि उम्र के इस दौर में आपरेशन का क्या मतलब है, इस जलालत का क्या औचित्य है, इस कठिनाई का क्या अर्थ है।"10

इसी कहानी में कितने अद्‌भुत ढंग से शिव नारायण सिंह ग्रामीण जीवन में परिवार का एक दूसरे के प्रति गहरे लगाव को दिखाते हुए कहते हैं –

"वे कहते हैं, मेरी दो आँखें ही अन्धी हुई है। मेरे पास आखों की कमी ही कहाँ है। मेरी पत्नी के पास दो आँखें है, मेरे चार बेटे-बेटियाँ हैं, जो शादी-शुदा हैं अर्थात दो बहुएँ और दो दामाद भी हैं। कुल कितनी आँखें हो गयीं, सोलह। फिर उन्होंने कहा, भगवान की बड़ी कृपा है मुझ पर कि मेरे उन बेटे-बेटियों के भी दो-दो बच्चे हैं।

अब कितनी आँखें हो गयीं ? चार दुनी आठ, आठ दुनी सोलह। पत्नी की भी दो आँखें है, बेटे, बहू, बेटी, दामाद मिलकर सोलह आँखें है और उनके भी दो-दो बच्चे हैं, कुल आठ अर्थात उनकी भी सोलह आँखे हैं। वे कहते हैं, हम सभी एक ही साथ रहते हैं।

अब बताइए, मेरी दो आँखें नहीं है तो क्या हो गया, मेरे घर में तो कुल चौंतीस आँखें हैं। कुल कितनी आँखें हो गयीं सोलह और सोलह, बत्तीस और दो, चौंतीस आँखें हैं। ठीक ही कहा उन्होंने, मेरे घर में तो चौतीस आँखें हैं। दो आँखें और होती तो छत्तीस हो जाती लेकिन उनका बहुत मतलब नहीं है। मेरा सारा कार्य इन चौंतीस आँखों से हो ही जाता है। इसलिए मुझे अपनी आँखों की जरूरत नहीं है।"11

ग्रामीण जीवन की चर्चा करते हुए शिव नारायण सिंह गाँव में एक दूसरे की परस्पर सहायता करने के भाव को उल्लेखित तो करते ही हैं, साथ-ही-साथ बड़ी ही सहजता से पलायन और उसके साथ आने वाली चुनौतियों को भी बहुत सुरुचिपूर्ण ढंग से उल्लेखित करते हैं, इसी प्रकार "रुई का पहाड़" कहानी में आप कहते हैं– "प्रिय विद्यार्थियों, बात मेरे ही गाँव की है। यहाँ से थोड़ी ही दूरी पर मेरा गाँव है। मेरे गाँव में धुनिया का एक परिवार रहता है। वह हमारा पुस्तैनी धुनिया है और उस परिवार का जो मुखिया है, सभी उसे हनीफ कहते। धुनिया आप समझते हैं, जो रूई धूनने का काम करता है। उस धुनिया के परिवार की परवरिश की जिम्मेदारी उसके बड़े बेटे पर है। कारण, पिता बूढ़ा हो चला है, अब उसके वश का नहीं है कि वह कुछ कर सके। किसी परिवार में जिम्मेदारी को आगे बढ़ाने का जो तरीका है वह यही है कि जो दूसरे नम्बर का होता है या घर में अगले जनरेशन में जो बड़ा होता है उसे जिम्मेदारी मिल जाती है।

यह लड़का जो उस धुनिया का बड़ा बेटा है, वह बहुत पढ़ा-लिखा नहीं है और जब कम पढ़ा-लिखा है, तो मजबूरी है कि करेगा क्या ? क्योंकि उसे नौकरी मिलनी नहीं है। अतः वह भी अपना पैतृक व्यवसाय ही चुनता है। उसका पैतृक व्यवसाय आप समझ ही रहे हैं, रूई धुनने का है। लेकिन घर की आर्थिक हालत इतनी अच्छी नहीं है कि वह अपना व्यवसाय खड़ा कर सके। तब मजदूरी करना उसकी मजबूरी है।

गाँव से ही थोड़ी दूरी पर भटनी बाजार है और उसी बाजार के किसी दुकान से वह थोड़ी रूई लाता है, धुनता है, धुनकर वापस पहुँचा देता है और उससे जो मजदूरी मिलती है, उसी से उसके परिवार का भरण-पोषण होता है, गुजारा होता है, काम चल रहा है।

अब बात कुछ नई घटती है। एक लड़का जो इस धुनिया का बचपन का क्लासमेट है, बचपन में साथ ही पढ़ा-लिखा है, वह बाहर से कमाकर गाँव आया हुआ है। वह उसे सलाह देता है, देखो मैं सूरत में एक कपड़े के मील में काम करता हूँ। तुम मेरा ठाट-बाट देख ही रहे हो, मैं चाहता हूँ कि तुम भी मेरे साथ वहाँ चलो। खूब पैसा कमाओ और मेरे जैसे रहो।

चूँकि बात दोस्त की है इसलिए उसे बहुत जल्दी समझ में आ जाती है। अभी यही बात उसका पिता कहता तो उसे समझ में नहीं आती, यह बताने की जरूरत नहीं है। तमाम चीजें आप आपस में समझ लेते

हैं, लेकिन जब हम समझाते हैं, तो वह आपको समझ में नहीं आती है। कुछ ऐसी ही बात वहाँ भी थी। वह लड़का जब उसे समझाता है, तो वह तुरन्त तैयार हो जाता है।

वे दोनों सूरत पहुँचते हैं। जो लड़का उसे सूरत ले गया है, वह उसे सूरत शहर घुमाता है, दिखाता है और उससे पूछता है कि यह जगह कैसी है? अब बताने की जरूरत नहीं है कि सूरत कैसी जगह है। उस धुनिये को वह जगह बहुत पसन्द आती है। वह जहाँ काम करता है वहाँ भी उसे ले जाता है, उसे कपड़े का मिल दिखाता है जहाँ रूई से धागा और धागे से कपड़ा बुनने का कार्य होता है। इस धुनिये को वह जगह भी बहुत पसन्द आती है।

चूँकि उस मिल में रूई से धागा तैयार होता और उस धागे से कपड़ा बुना जाता है, तो ढेर सारी रूई की आवश्यकता होती है और यह सब सामान गोदाम में रखा होता है। वह वाहवाही में अपने मित्र को ले जाता है और रूई का गोदाम दिखाता है। जब वह धुनिया गोदाम में रूई का ढेर देखता है, तो एकाएक बोल पड़ता है, यह तो रूई का पहाड़ है।

गोदाम में जब रूई भरा रहेगा तो पहाड़ जैसा ही दिखाई देगा। धुनिया कहता है यह तो रूई का पहाड़ है। उसका दोस्त कहता है, हाँ-हाँ, यहाँ तो इस तरह के सैकड़ों पहाड़ हैं। तुम यह देखे तो क्या देखे, अभी मैं तुम्हें थोड़ा और आगे ले चलकर इससे भी बड़े-बड़े पहाड़ दिखाऊँगा।

धुनिया कहता है, आखिर इसे कौन धुनेगा ? धुनिया क्या कहता है? इसे कौन धुनेगा ? न बाबा न, मेरे वश का नहीं है। तब क्या होता है, जानते हैं ? बस, वह धुनिया यही कहना शुरू कर देता है, न बाबा न, इसे कौन धुनेगा। उसने रूई का पहाड़ देख लिया, वह कहता है, न बाबा न, मेरे वश का नहीं है, इसे कौन धुनेगा और वह सनक जाता है। वह लड़का जो उस धुनिये को लेकर वहाँ गया हुआ था, उसने तो कुछ और ही सोचा था। उसे क्या पता था कि यह रूई का पहाड़ देखकर सनक जाएगा। अरे, उस धुनिये ने रूई का पहाड़ कभी देखा तो था नहीं, इतनी रूई कभी एक साथ नहीं देखी। वह तो थोड़ी-थोड़ी रूई ले जाता था और धुनता था।

उसे लगा कि यह सब मुझे ही धुनना है और वह सनक गया। अब जो उसे अपने साथ ले गया है वह परेशान है। उसे जगह-जगह ले जाता है. दवा कराता है, इलाज कराता है. लेकिन कोई फायदा नहीं होता। वह बस एक ही रट लगाये रहता कि न बाबा न, कौन धुनेगा; न बाबा न, कौन धुनेगा।"12

आगे जीवन की सरलता को समझाने के लिए शिव नारायण सिंह इसी बोधकथा में कहते हैं- "यहाँ ईश्वर ने प्रत्येक व्यक्ति के जिम्मे एक निश्चित कार्य दे रखा है। अब यह उसकी जिम्मेदारी है कि वह उसे कितने ढंग से, कितनी ईमानदारी से, कितने सलीके से, कितनी ऊर्जा से और कितनी उत्कृष्टता से सम्पन्न करता है।

ईश्वर का वास प्रकृति में है, वह प्रकृति स्वरूप है या यूँ कहूँ यह दुनिया ईश्वर की रचना है। यह भी कहा जा सकता है कि जिसकी रचना इतनी सुन्दर तो वह स्वयं कितना सुन्दर होगा ? इस दुनिया को, इस प्रकृति को बनाने के प्रयास में वह जरूर प्रकृतिस्थ हो गया होगा, तभी यह सम्भव हुआ होगा।

प्रकृति केवल पाँच तत्वों से बनी है जो हमारे अन्दर भी है। क्या इस बात को हम नहीं जानते और जानते हैं, तो फिर दोनों में इतना अन्तर क्यों ? मनुष्य को प्रकृति के समीप होना चाहिए, पास जाना चाहिए, प्रकृति में ही रहना चाहिए, प्रकृति में ही होना चाहिए और वह इससे दूर भाग रहा है, दूर होता जा रहा है। जिसका परिणाम आप देख ही रहे हैं और समझ ही रहे हैं।

धुनिया को किस बात की चिन्ता थी ? इतनी ज्यादा रूई है, इसे कौन धुन पाएगा और वह ऐसा सोचकर पागल हो गया, सनक गया। यहाँ आप भी विकास की दौड़ में लगे हैं। जिसे आप अपनी विकास की दौड़ कहते हैं। मुझे लगता है कि वह अंधी दौड़ है और जब आप उसमें शामिल हैं, तो बताने की जरूरत नहीं है कि आप विकास की जगह विनाश खोज रहे हैं, विनाश देख रहे हैं और विनाश पा रहे हैं। जबकि आपको करना क्या चाहिए ? आपको शान्तचित्त होकर, प्रकृतिस्थ होकर ईश्वर की दी हुई उस उदारता को पूरा करना चाहिए जो उसने आपके लिए छोड़ रखी है।"13

समीक्षात्मक लेख 'धरती पर धूल- कण खोजती वर्षा की बूँदें' के माध्यम से सर्वेन्द्र विक्रम सिंह कहते हैं कि - "हमारा भारत देश। हमारे भारत देश में जहाँ हरियाली का अखण्ड साम्राज्य था और जहाँ

सभी प्रकार के पक्षी तथा वन-पशु बिना रोक-टोक के विचरते तथा वास करते थे, जिसकी विशेषता को देखकर महाकवि रवींद्रनाथ टैगोर ने कहा था— " सुजलां सुफलां मलयजशीतलाम् शस्यश्यामलां मातरम्" परन्तु अब स्वच्छ और स्वस्थ पर्यावरण साहित्य, लिखने, पढ़ने या भाषणों में कहने-सुनने की वस्तु रह गया है। यथार्थ स्थिति बहुत भयावह है।लेकिन शिव नारायण सिंह एक समाज-सुधारक के रूप में पर्यावरण दूषित न हो, इसके लिए जो अनूठा प्रयास कर रहे हैं, वह भी अपने आप में अनुकरणीय है।"14

समीक्षात्मक लेख 'आँधियों के बीच एक दीया' के माध्यम से डॉ. प्रणय कृष्ण कहते हैं कि - "शिव नारायणजी की खूबी यह है कि उनके पास लोकजीवन में प्रचलित बोधकथाओं का विपुल भण्डार है, ग्रामीण और किसान जीवन के समृद्ध अनुभव हैं। गाँव में लोहार, कुम्हार आदि तमाम परम्परिक पेशों का अनुभव समृद्ध ज्ञान है, पशु-पक्षियों के प्रतीक पंचतंत्र से लेकर परम्परा से चली आई तमाम नीति-कथाएँ उनके लिए हस्तकमलवत हैं, कुशीनगर से आने के चलते बुद्ध की शिक्षाओं की अनेक प्रेरक कहानियाँ हैं।"15

शिव नारायण सिंह अपनी बोधकथाओं के माध्यम से ग्रामीण जीवन की उत्तम व्यवस्थाओं का भी विलक्षण चित्रण करते हैं। उदाहरण के लिए 'नेकी-बदी' बोधकथा में वह ग्रामीण जीवन में पंच के सर्वमान्य होने की सुन्दर व्यवस्था का उल्लेख करते हुए कहते हैं- "प्रिय विद्यार्थियों, आज की कथा वार्ता जिसे आप मनुष्य में मनुष्यता की खोज कह सकते हैं। एक व्यक्ति कहीं जा रहा है। रास्ते में जंगल पड़ा और संयोग कुछ ऐसा कि वह जंगल पार कर चुका है। तभी झाड़ियों से आवाज आती है बचाओ ! बचाओ ! वह घूमकर देखता है तो झाड़ियों में आग की लपटें और उनके बीच फँसा एक सर्प, पहले तो थोड़ा डरा, किन्तु मनुष्यता ने ऊबाल मारा और उस व्यक्ति ने अपनी लाठी से उस सर्प को उठाया और ऊँचाई की ओर ऐसे उछाला कि वह लपटों के ऊपर से बाहर आ जाए।

ऐसा ही हुआ भी, सर्प पर लपटों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा किन्तु जब वह उस ऊँचाई से घिरा तो इस व्यक्ति के ऊपर ही गिर पड़ा। इस व्यक्ति की प्राथमिकता सर्प को अग्नि से सुरक्षित बाहर निकालना है। इसे क्या पता है कि वह इसके ऊपर ही आ गिरेगा। सर्प व्यक्ति के गले में पड़कर फूँफकारने लगा अब तो इस व्यक्ति को काटो तो खून नहीं। करे तो करे क्या ?

व्यक्ति ने सर्प से कहा यह क्या ? मैंने तुम्हारे प्राणों की रक्षा की। तुम्हें अग्नि से सुरक्षित बाहर निकाला। चाहता तो घसीटकर भी बाहर कर सकता था। तुम जल जाते। यूँ ही बिना तुम्हारी बात सुनें आगे बढ़ जाता तो तुम्हारा जीवन समाप्त हो जाता। सर्प ने कहा- अभी मेरा बड़प्पन समझो कि मैं केवल फुफकार ही रहा हूँ। मैं तुम्हें काट भी सकता हूँ। व्यक्ति ने कहा- यह क्या, मैंने तुम्हारे साथ नेकी की है और तुम मेरे साथ बदी करने पर तुले हो ? यह कैसा न्याय है ? तुम मेरे साथ अन्याय कर रहे हो।

सर्प ने कहा- यह कोई नई बात नहीं है यहाँ तो नेकी के बदले बदी ही होता है। तुम चाहो तो पंचायत करा लो जिसे चाहो पंच मानलो मैं तैयार हूँ। वहाँ दूर-दूर तक जब कोई जीव-जन्तु नहीं दिखा तो दोनों पास के एक बरगद के पेड़ को पंच स्वीकार कर उसके पास गए और अभिवादन कर कहे- हमारी एक समस्या है। आपको पंच मानते हुए हम दोनों अपनी बात रखते हैं।

बरगद ने कहा- ऐसी क्या समस्या है ? कहो ! दोनों ने पूर्व की सारी बात बतायी। फिर व्यक्ति ने कहा- क्या नेकी का बदला बदी ही होता है। बरगद ने कहा- हाँ नेकी का बदला बदी ही होता है। मनुष्य यही तो करता है। देखो अभी कुछ दिन पहले की बात है उधर से एक बारात निकली दोपहर का समय था। तेज धूप थी, सभी ने मेरी छाँव में दिन बिताया और जाते समय अपने हाथी-घोड़े और अन्य जानवरों के लिए मेरी डाल, टहनियाँ और पत्तों को काटकर मुझे बौना बना दिया। इसे क्या कहेंगे ? यही न कि नेकी के बदले बदी ही होता है। बरगद ने कहा- सर्प चाहे तो इस व्यक्ति को काट सकता है।

उस व्यक्ति ने कहा- नहीं यह सरासर अन्याय हैं। हमें किसी और पंच के सम्मुख अपनी बात रखनी चाहिए, फिर उस व्यक्ति ने इधर-उधर नजर दौड़ाई किन्तु कोई जीव-जन्तु दिखाई नहीं पड़ा। सर्प और व्यक्ति पंच की खोज करने आगे बढ़ना चाहते तब तक बरगद ने कहा- क्यों व्यर्थ में इधर-उधर पंच खोजते भटकोगे, क्यों नहीं सामने जो सरोवर है उसे ही पंच मानकर उससे अपनी बात कहो।

बात दोनों को समझ आती है और अब तीनों

बरगद, सर्प और वह व्यक्ति अभिवादन के साथ सरोवर से कहते हैं- हमारी एक गम्भीर समस्या है। आप पंच बनकर इसका निदान करने की कृपा करें। सरोवर ने कहा-ऐसी क्या समस्या आन पड़ी जो आप तीनों यहाँ उपस्थित हुए। व्यक्ति ने पुनः अब तक की सारी घटना से सरोवर को अवगत कराया और कहा- अब आप ही बताइए। नेकी के बदले बदी कहाँ तक उचित है।

सरोवर ने कहा- यहाँ नेकी के बदले बदी ही होता है। अतः यह उचित है। देखो न मनुष्य कितना स्वार्थी है। मैं उसके लिए क्या-क्या नहीं करता, रात-दिन एक करके अपने जल को शुद्ध बनाए रखता हूँ। मेरे ही जल से उसका जीवन चक्र चलता है। उसकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है और वह है कि सदैव मेरे अस्तित्व को समाप्त करने में लगा रहता है। यहाँ नेकी का बदला बदी ही होता है, अतः सर्प चाहें तो इस व्यक्ति को काट सकता है।"16

शिव नारायण सिंह अपनी बोधकथाओं के माध्यम से ग्रामीण समाज में आज भी व्याप्त बुजुर्गों के सम्मान और उनकी विलक्षण बुद्धिमत्ता का भी उल्लेख करते हैं, 'पूर्ण समर्पण' कहानी में वह बुढ़िया माई का जिक्र करते हुए कहते हैं "प्रिय विद्यार्थियों, आज की कथा वार्ता एक बुढ़िया माई की है। बुढ़िया माई समझते हैं आप। अपने ही घर की बुजुर्ग महिलाओं को अन्य लोग बुढ़िया माई भी कहते हैं। हम लोग तो अपने रिश्ते से बुलाते हैं और अन्य लोग बुढ़िया माई कहते हैं। यहाँ हम लोग भी अन्य लोग ही हैं। इसलिए बुढ़िया माई ही कहेंगे।

अब बुढ़िया माई के बारे में कहा जाता है कि वह अपने पूरे जीवन में, अब तक के जीवन में, जैसा कि देखने में आया, आचार-विचार और व्यवहार में पूर्णतः सात्विक जीवन जीती हैं, आध्यात्मिक जीवन जीती हैं। वह अपना कोई भी कार्य, कोई भी कृत्य बिना ईश्वर को समर्पित किये नहीं करती। कुछ भी करना है तो भगवान को समर्पित करके ही करती हैं। सामान्यतः अपने भी घरों में ऐसा ही होता है।

भोजन बनता है। पहले भगवान को भोग लगता है। उसके बाद ही और लोग ग्रहण करते हैं। कभी आप जल्दी मचाते हैं न स्कूल जाने में देर हो रहा है, ऐसा है, वैसा है, तब भी आपको टिफिन नहीं दिया जाता है। भगवान को भोग लगाये बिना आपकी टिफिन नहीं भरी जाती है। कोई भी नया काम जो आप करते हैं, भगवत-भजन, पूजन से ही शुरू होता है। किन्तु जैसा कि मैंने बताया बुढ़िया माई के बारे में वह अपना सभी कृत्य ईश्वर को समर्पित करके करती हैं। अब सुबह-सुबह उनका काम आप जान ही रहे हैं। सुबह-सुबह पहला काम शुरू करती हैं झाड़ू लगाना। अब ये बुढ़िया माई कुछ ज्यादा ही फास्ट हैं। तीन बजे ही उठ जाती हैं। काम क्या है पूरा घर के अन्दर-बाहर झाड़ू करने के बाद क्या इकट्ठा होता है ? कूड़ा-कचरा न।

तब यह बुढ़िया माई जो कूड़ा-कचरा इकट्ठा करती हैं उसे ले जाती हैं घूरे पर फेंकने के लिए।

जब घूरे पर फेंकती हैं तो क्या कहती हैं मालूम है, हे ईश्वर ! हे प्रभु ! तेरा तुझको अर्पण। क्या कहती है, हे प्रभु ! हे ईश्वर ! तेरा तुझको अर्पण। जैसा हम सूर्य को अर्घ्य देते हैं वैसे ही तो कूड़ा भी फेंका जाता है। जिस भी बर्तन में रखें, चाहे खाँची में, चाहे बाल्टी में, तो फेंकते समय क्या कहती हैं हे प्रभु तेरा तुझको अर्पण।"17

इसी बोधकथा में आगे शिव नारायण सिंह विद्यार्थियों को समझाते हैं– "प्रिय विद्यार्थियों, लेकिन उतने से तो होना नहीं है, क्योंकि कचरा तो सभी फेंकते हैं कचरा भी है ? फेंकने वाला भी है और फेंका भी जा रहा है। एक दो नहीं लाखों लोग फेंक रहे हैं। तुम्हें भी फेंकने का मौका मिलेगा जाकर फेंकोगे। अब चाहे लाख बार कह लो, 'तेरा तुझको अर्पण' तेरा तुझको अर्पण, तेरा तुझको अर्पण, पहुँचेगा। अरे ! पहुँचना होता तो पहुँचता नहीं ? इतने लोगों का यहाँ है कहाँ पहुँच रहा, एकदम नहीं पहुँच रहा है।

केवल एक ही आदमी का पहुँच रहा है, बुढ़िया माई और फेंकने वाले लाखों करोड़ों हैं, उदाहरण दें तो लम्बा हो जायेगा। ऐसे ढ़ेर सारे उदाहरण पड़े हैं, बुद्ध से लेकर अब तक। सत्य यह है कि जो भी आप कृत्य कर रहे हैं, उस कृत्य में आप कितने समर्पित हैं और उस कृत्य के प्रति कितने समर्पित है। वह उतना आगे है या उसकी उतनी पहुँच है, वह वहाँ तक पहुँचा है।

आप पढ़ने आते हैं, निश्चित रूप से कुछ लोग वास्वत में पढ़ते हैं। कुछ लोग केवल पढ़ते है और कुछ की बात मैं नहीं करता क्योंकि उनके लिए मेरे पास शब्द नहीं है। कहना सुनना यह प्रक्रिया है लेकिन उसे आत्मसात् करना आपकी अपनी आवश्यकता है। कहीं-न-कहीं उसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए

आप यहाँ आये हैं और कर भी रहे हैं, करते रहिये। यही मार्ग है।"18

शिव नारायण सिंह अपनी बोधकथाओं के माध्यम से ग्रामीण समाज की विद्वता और सत्संग के प्रति आदिकाल से चली आ रही आस्था का भी उल्लेख करते हैं। किसी भी समाज के विकास को समझने का एक पैमाना यह भी हो सकता है कि वह समाज अपने विद्वानों को कितना सम्मानित करता है। इस सन्दर्भ में 'मान-सम्मान' बोधकथा में शिव नारायण सिंह कहते हैं– "प्रिय विद्यार्थियों, किसी गाँव में एक बहुत पहुँचे हुए यूँ कह लीजिए कि बुद्ध पुरुष पहुँचे हुए थे। गाँव में उनका बड़ा सम्मान हो रहा था। लोग उन्हें तरह-तरह से पूजते और सेवा-सुश्रूषा में लगे रहते।

वे संतजी उस गाँव में पहले भी आ चुके थे। पूरे गाँव से उन्हें बहुत लगाव हो गया था, अब उनकी इच्छा हुई कि आज एक बार फिर गाँव को देखा जाय। चूँकि अब वे वृद्ध हो चले थे, पैदल चलकर गाँव घूम नहीं पाते। वह गाँव पहाड़ी पर बसा हुआ था। उन्हें गाँव दिखाने के लिए किसी साधन की आवश्यकता हुई। तब कुछ लोगों ने कहा कि कंधे पर उठा लेते हैं, किसी ने कुछ कहा, किसी ने कुछ कहा। तब संतजी ने कहा कि नहीं, कोई और व्यवस्था करो।

गाँव पहाड़ी पर बसा है और कोई साधन मिला नहीं। उस गाँव में घोड़ा था ही नहीं, खच्चर खोजा गया तो कहीं बाहर जा चुका था। बचा कौन ? अब चूँकि वे संत थे, उनके लिए कोई बात नहीं थी, लेकिन आपको चढ़ाया जाता तब शायद दूसरी बात होती।

संतजी को जब सवारी पर चढ़ाकर पूरा गाँव घुमाया जा रहा था तो आप समझ ही रहे हैं कि जिस रास्ते से संत गुजरते लोग उनके ऊपर फूल बरसाते, उनकी जय-जयकार करते। कोई दूर से ही दण्डवत् हो जाता, लेट जाता, उन्हें प्रणाम करता। ढोल-मंजीरे बज ही रहे थे, गीत गाये जा रहे थे। उस वातावरण को देखकर लग रहा था जैसे स्वर्ग वहीं उतर आया हो।"19

अपने तरीके का एक नया काम' समीक्षात्मक लेख में यथार्थवादी समीक्षक डॉ. बलभद्र जी कहते हैं- "अपनत्व की परिभाषा है क्या? आपको नहीं लगता कि हम सभी लोग अपने हैं। क्या आप सभी के लिए यह भाव नहीं रख सकते? निश्चित ही शिव नारायण सिंह के विश्व बंधुत्व का यह पाठ सभी को पढ़ना होगा, चाहे शिव नारायण बाबू से पढ़े या स्वयं से, क्योंकि यही हमारी संस्कृति रही है। 'परो अहम् तनस्त' ऐसा हम नहीं मानते, हमने सबके मंगल की कामना की है। हम 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के पक्षधर हैं, हम सभी का भला चाहते हैं। हम सभी को अपने परिवार का सदस्य मानते हैं।"20

समीक्षात्मक लेख में 'बोधकथाएँ नवल उत्थान की ओर' में समीक्षा करते हुए उद्भव मिश्र जी कहते हैं- "अपनी कृति में व्यक्ति अपने विभिन्न रूपों में कहीं-न-कहीं उपस्थित होता है। इन उद्बोधन कथाओं के अचेतन में जो व्यक्ति खड़ा है, वह छत्तीसगढ़ के बिलासपुर जिले के हिर्री माइन्स थाने के शासकीय आवास में पैदा होता है और वहीं की प्राकृतिक सुषमा में पला-बढ़ा होता है तथा जिस बाबा की गोद में लेटकर कहानियाँ सुनने का सान्निध्य प्राप्त होता है उस बाबा का गाँव है देवरिया जनपद में गण्डक नदी के किनारे का गाँव छपिया। इसीलिए वे परिचित हैं खेतों में होनेवाले खरपतवार से, यहाँ तक कि गुम्हीं, भटकोआ, गूम, भंगरईया और मकई के खेत में बननेवाले मचान से।

यही कारण है, उनके सपनों में छोटी गण्डक के किनारे बसा उनका गाँव छपिया है और उनके गाँव में रहने वाले चंद्रिका लोहार की भाथी है, धोबी और कुम्हार हैं, जिनके माध्यम से वे कथा बुनते हैं, ज्ञान और सूचना का एक-एक दाना चुनते हैं और कोशिश होती है विद्यार्थियों तक वैसे ही पहुँचा देने की, जैसे घोंसले में प्रतीक्षारत चूजे की चोंच में लाकर चिड़िया दाना रख देती है। वैसे ही कथाओं के माध्यम से वे अपनी बात रख देते हैं, बच्चों के दिलोदिमाग में।"21

निष्कर्ष– शिव नारायण सिंह जी की ग्रामीण जीवन पर आधारित बोधकथाओं का स्वरूप, ग्रामीण यथार्थ की बहुविध झलक दिखाता है। वास्तव में ग्रामीण कथा-साहित्य का लक्ष्य विशेष भू-भाग एवं वहाँ की जीवन-शैली प्रस्तुत करना होता है। इसके लिए कथाकार जिस महत्त्वपूर्ण पद्धति या प्रक्रिया को अपनाता है, वे ही ग्रामीण जीवन के तत्व माने जाते हैं। शिव नारायण सिंह की कथा-शैली जैसे इसे बहुत गूढ़ता से समझती है। भारत माता के ग्रामांचल के निवासी शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में कथानक का ग्राम्य आधार, लोक-संस्कृति का चित्रण, राजनीतिक, सामाजिक, पारिवारिक और आर्थिक

परिस्थितियों का चित्रण, भौगोलिक स्थिति तथा प्रकृति-चित्रण, पात्रों के चरित्र विकास में गाँवो का योगदान आदि प्रमुखता से उल्लेखित हैं। शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में पात्रों और चरित्र चित्रण के माध्यम से ग्रामीण जीवन का समग्र यथार्थ चित्रित होता है और साथ ही संवाद एवं भाषा-शैली के आधार पर ग्रामीण भाषा एवं लोक संस्कृति का चित्रण होता है। अंततः शिव नारायण सिंह अपनी इन व्यापक और मर्मस्पर्शी बोधकथाओं के माध्यम से ग्रामीण जीवन के महत्त्व और वैभव को पुनर्स्थापित करने का महनीय कार्य करते हुए दिखाई देते हैं।

सन्दर्भ सूची–

1. केसर, डॉ. कीर्ति: स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी का समाज-सापेक्ष अध्ययन, पृष्ठ संख्या- 13
2. अवस्थी, देवी शंकरः साहित्यिक विधाओं की प्रकृति, पृष्ठ संख्या- 140-141
3. अवस्थी, देवी शंकरः साहित्यिक विधाओं की प्रकृति, पृष्ठ संख्या- 114
4. तिवारी, डॉ. नित्यानंद साहित्य का स्वरूप, पृष्ठ संख्या- 82
5. तिवारी, डॉ. नित्यानंद साहित्य का स्वरूप, पृष्ठ संख्या- 82-83
6. हिन्दी शब्दसागर, सम्पादक- श्यामसुन्दरदास, भाग- तीन, पृष्ठ संख्या- 1372
7. ग्रामीण साहित्य स्वरूप और समस्या, आनंद यादव, पृष्ठ संख्या- 1 से अनुदित
8. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से... संचयन', प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 399 – 400
9. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से... संचयन', प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 400
10. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 677 – 678
11. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 678 – 679
12. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 161 – 162
13. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 164 – 165
14. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 64
15. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 106
16. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से... संचयन', प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 590 – 591
17. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से... संचयन', प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 457 – 458
18. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से... संचयन', प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 465 – 466
19. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से... खण्ड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 204 – 205
20. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 154
21. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 223

वर्ष: 2026 | वॉल्यूम: 02 | अंक: 03 | कुल अंक: 04

समकालीन समाज की विडंबनाएँ और शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ : एक पुनर्व्याख्यात्मक अध्ययन

श्रद्धा त्रिपाठी
शोधार्थी
बोधकथा शोध संस्थान
शिवलोक, गोरखपुर उ.प्र.

प्रस्तावना – समकालीन समाज अनेक प्रकार की विडंबनाओं से घिरा हुआ है। एक ओर जहाँ विज्ञान व तकनीक और आर्थिक क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति हुई है, वहीं दूसरी ओर मानवीय मूल्यों का ह्रास, नैतिकता का संकट और सामाजिक असन्तुलन भी उसी तीव्रता से बढ़ा है। आधुनिक मनुष्य वाह्य रूप से जितना सशक्त और अधिक संसाधनयुक्त दिखाई देते है आन्तरिक रूप से उतना ही विखण्डित और असन्तुष्ट प्रतीत होता है। यही द्वंद्वात्मक स्थिति को साहित्य ने सदैव अभिव्यक्ति दी है।

समकालीनता का तात्पर्य केवल वर्तमान समय में जीना नहीं है, बल्कि उस समय की नैतिकता, समस्याओं और जीवन दृष्टि को समझना भी है। इसी सन्दर्भ में बोधकथा जैसी विधा का महत्त्व बढ़ जाता है। हिन्दी साहित्य में बोध-कथाओं की परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है, जिसमें पंचतंत्र और हितोपदेश जैसे ग्रंथ प्रमुख हैं। बोधकथाएँ अपने संक्षिप्त रूप में जीवन के गहरे सत्य प्रस्तुत करती हैं। बोधकथाओं की परम्परा को आधुनिक सन्दर्भों में पुनर्परिभाषित करने वाले कथाकारों में शिव नारायण सिंह का महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनकी बोध कथाएँ केवल नैतिक शिक्षा तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे समकालीन समाज की जटिलताओं, विडंबनाओं और विसंगतियों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करती हैं।

लघु आकार के बावजूद ये कथाएँ समकालीन समाज की जटिलताओं और नैतिक पतन पर उसी दक्षता के साथ प्रहार करती हैं। शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ परम्परागत बोधकथाओं के प्राचीन शिल्प को समकालीन मुद्दों में ढालती हैं। इनकी बोधकथाएँ - 'काँटे और फूल', 'मानवीय सत्ता', 'स्वप्न और यथार्थ' आदि आज के परिप्रेक्ष्य में युवाओं के मानसिक द्वंद्वों और नैतिक दिशा को रेखांकित करती हैं।

ये कथाएँ संघर्ष की अनिवार्यता, दृढ़निश्चयता और यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाने का संदेश देती हैं जो युवाओं के लिए अत्यन्त प्रासंगिक है। 'काँटे और फूल' संघर्ष के बिना सफलता की असंभावना को दर्शाता है, जबकि 'मानवीय सत्ता' तकनीकी युग में भी मानवीय संवेदनाओं को बनाए रखने पर जोर देती है। 'स्वप्न और यथार्थ' सोशल मीडिया के दौर में कल्पना और यथार्थ के बीच सन्तुलन स्थापित करने का संदेश देती है। इस प्रकार ये वर्तमान में 'कैरियर' के पीछे दौड़ लगाते हुए युवाओं के लिए एक नैतिक और मानसिक मार्गदर्शक की भूमिका निभाती हैं।

शिव नारायण सिंह की कथाएँ अक्सर यह संदेश देती हैं कि सच्चा वह नहीं है जो दिखता है, अपितु वह है जो विडंबनाओं के पर्दे के पीछे छिपा है। समानता का वह वर्ग जो आदर्शों की बातें तो करता है, किन्तु आचरण में अवसरवादी है- उस मुखौटे को ये कथाएँ बड़ी निर्ममता के साथ उतारती दिखाई पड़ती है। आज के दौर में जब फेकन्यूज और सूचनाओं का अम्बार है, शिव नारायण सिंह की कथाएँ हमें विवेक की ओर वापस ले जाती हैं। यही उनकी पुर्नव्याख्या की सार्थकता है।

साहित्य की वास्तविक शक्ति उसकी बहुस्तरीयता और पुनर्पाठ की संभावनाओं में निहित होती है। कोई भी रचना केवल अपने समय तक सीमित नहीं रहती, बल्कि विभिन्न युगों में एक नए अर्थ ग्रहण करती है। यही कारण है कि पुर्नव्याख्या साहित्यिक अध्ययन का एक महत्त्वपूर्ण उपकरण बन जाती है। शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ इस दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि वे पारंपरिक बोधकथा की संरचना को अपनाते हुए भी आधुनिक जीवन की जटिलताओं को उद्घाटित करती हैं।

बीज- शब्द– मानवीय मूल्य, नैतिक संकट,

समकालीनता, पुर्नव्याख्या, सामाजिक विडंबना, संवेदनशीलता, मानवीय सत्ता, मानवीय संवेदना, यथार्थवादिता, निर्ममता।

सारांश– समकालीन समाज की विसंगतियों और विडंबनाओं के विश्लेषण में सबसे पहली विडंबना आर्थिक असमानता के रूप में सामने आती है। दूसरी महत्त्वपूर्ण विडंबना नैतिक मूल्यों का पतन है। सामाजिक क्षेत्रों में विचार, समुदायी विकास, वैश्विक स्तर पर, राजनीतिक और प्रशासनिक स्तर पर व्याप्त विडंबनाएँ स्पष्ट तौर पर देखी जा सकती हैं। सांस्कृतिक स्तर पर परम्परा और आधुनिकता के मध्य संघर्ष भी एक महत्त्वपूर्ण विडंबना है।

इन सभी विडंबनाओं के बीच साहित्य की भूमिका अत्यन्त प्रासंगिक हो जाती है। साहित्य न केवल समाज का प्रतिबिम्ब होता है, बल्कि वह समाज की समस्याओं का विश्लेषण और समाधान भी प्रस्तुत करता है। विशेष रूप से बोधकथा जैसी विधा जो सरल और संक्षिप्त रूप में सत्य का उद्घाटन करती है, आज के सन्दर्भ में महत्त्वपूर्ण हो जाती है।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ समकालीन समाज की विसंगतियों को उजागर करते हुए एक नई व्याख्यात्मक दृष्टि प्रदान करती हैं। प्रस्तुत शोधलेख में समकालीन समाज की विडंबनाओं का विश्लेषण करते हुए शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं का पुनर्पाठ करने का प्रयास किया गया है। यह लेख स्पष्ट करता है कि उनकी कथाएँ केवल नैतिक शिक्षा नहीं, बल्कि सामाजिक- चेतना का सशक्त माध्यम हैं।

लेख का औचित्य– इस शोधलेख के शीर्षक का चयन इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि बोधकथा परम्परा पर तो बहुत कार्य हुआ है, परन्तु आधुनिक पुर्नव्याख्या पर सीमित अध्ययन हैं। विशेष रूप से शिव नारायण सिंह जैसे कथाकार पर अपेक्षाकृत कम ही शोध हुआ है।

उद्देश्य–

- समकालीन समाज की प्रमुख विडंबनाओं का विश्लेषण करना।
- बोधकथा परम्परा के स्वरूप और विकास का अध्ययन करना।
- शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं का आलोचनात्मक विवेचन करना।
- उनकी कथाओं का पुर्नव्याख्यात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करना।
- सामाजिक और नैतिक दृष्टि से उनके योगदान को स्थापित करना।

समकालीन समाज की विडंबनाएँ– समकालीन समाज विरोधाभासों का समाज है। यहाँ विकास और विनाश, समृद्धि और गरीबी, स्वतंत्रता और बंधन सभी एक साथ विद्यमान हैं।

आर्थिक असमानता– समकालीन समाज की सबसे प्रमुख विडंबना आर्थिक स्तर में परिलक्षित होती है। और आज वैश्वीकरण और आर्थिक उदारीकरण के फलस्वरूप वैश्विक अर्थव्यवस्था अत्यन्त तीव्र गति से विकसित हुई है किन्तु इसके साथ ही आय और सम्पत्ति का असमान वितरण भी उसी द्रुत गति से बढ़ा है। एक ओर समाज का एक वर्ग अत्यन्त समृद्ध होता जा रहा है, वहीं दूसरी ओर एक बड़ा तबका आज भी गरीबी, बेरोजगारी और अभाव का जीवन जीने के लिए अभिशप्त है। यह वर्ग मूलभूत सुविधाओं के लिए संघर्षरत है।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ समकालीन उदारीकरण के दौर में उपभोक्तावाद, भौतिकवादी प्रतिस्पर्धा और स्वार्थकेंद्रित जीवनशैली जैसी विडंबनाओं के बीच नैतिक सन्तुलन का कार्य करती हैं। ये कथाएँ मानवीय मूल्यों, कर्मों और मानवीय सत्ता को प्राथमिकता देकर बाजारवाद के पाखण्ड के मुकाबले मानसिक संबल प्रदान करती हैं। अपनी आवश्यकता को साधकर संतोषभाव में ही मनुष्य को सुख की प्राप्ति हो सकती है। विद्यार्थियों से... खण्ड छः की बोधकथा 'इच्छापूर्ति' में वे कहते भी हैं, "अगर हम यह तय कर लेते हैं कि हमें कितने की जरूरत है और जो हमारे पास है उसकी कितनो को जरूरत है तो निश्चित जानिए हमने अपनी दिशा पा ली, हमने अपना लक्ष्य पा लिया, हमने अपने मन को जीत लिया और जिसने मन को जीत लिया उसने सारे जगत को जीत लिया।"1

नैतिक मूल्यों का पतन– दूसरी महत्त्वपूर्ण विडंबना नैतिक मूल्यों का पतन है। आधुनिक समाज में सफलता का मापदण्ड नैतिकता नहीं, बल्कि दौलत और ख्याति बन गया है। ईमानदारी, सामाजिकता और सद्गुणों जैसे जीवन मूल्य धीरे-धीरे हाशिए पर चले गए हैं। इंसान अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए

अकल्पनीय स्तर तक गिरने के लिए तैयार है। परिणामस्वरूप भ्रष्टाचार और अनैतिकता समाज के सामान्य व्यवहार का हिस्सा होता चला जा रहा है और उसकी आंतरिक मानवीय सत्ता संकुचित होती गई है। शिव नारायण सिंह की बोध कथाएँ इसी संकुचन को रोकने का एक सार्थक प्रयास हैं। वे विद्यार्थियों को यंत्र बनने के विरूद्ध सचेत करते हैं।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी साहित्य की इसी मानवीय पक्ष को रेखांकित करते हुए अपनी कहानी कृति 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' में लिखते हैं, "मैं साहित्य को मनुष्य की दृष्टि से देखने का पक्षपाती हूँ। जो वाङ्मय मनुष्य की दुर्गति, हीनता, परमुखापेक्षिता से बचा सके... उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है।"2

द्विवेदी जी का यह मापदण्ड शिव नारायण सिंह की कथाओं पर सटीक बैठता है। जब वे 'मानवीय सत्ता' कथा में शरीर के अंगों के यांत्रिकीकरण की बात करते हैं तो उनका मूल उद्देश्य श्रोता एवं पाठक को 'परमुखापेक्षिता' से बचाना है।

'मूल्यों के निर्माण कलश' में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद पाण्डेय लिखते हैं, " श्री सिंह अपने विद्यालय में पुस्तकीय ज्ञान के साथ- साथ नीति विषयक एवं बोधकथाओं के माध्यम से बच्चों को सुसंस्कृत, आचारवान, विनम्र, कर्त्तव्यनिष्ठ, ईमानदारी, साहस, सहजता, स्वच्छता, सहृदयता, स्वार्थहीनता धर्म, शान्ति नियंत्रण अनुशासन, निष्ठावान, अनुशासित, व्यावहारिकता का ज्ञान दिलाने का सत्प्रयास करते रहते हैं, क्योंकि केवल पुस्तकीय ज्ञान से तो शिक्षा के उद्देश्य को पूरा नहीं किया जा सकता।" वे आगे लिखते हैं, " देश और समाज के लिए नैतिकता एक प्रश्नचिन्ह बन हुआ है, क्योंकि हमारे देश का अतीत रत्नों से भी अधिक जाज्वल्यमान रहा है। इस सोने की चिड़िया कहा जाता था पर बड़े दुःख की बात है कि ऐसा विश्वशिरोमणि' भारत देश आज पतन की ओर जा रहा है। समाज में सुधार करना बड़ा कठिन कार्य है। पथभ्रष्ट व्यक्ति को नैतिक स्तर पर ले आना एक दुष्कर कार्य है। इस दुष्कर कार्य को साधने हेतु एवं समाज और देश के उत्कर्ष के लिए श्री सिंह ने अकेले ही अपने जीवन को सत्य का प्रयोग बना दिया।"3

आज के उत्तर- आधुनिक समाज में जहाँ 'सूचनाओं' की बाढ़-सी है वहाँ लघु कथाओं का महत्त्व और भी बढ़ गया है। डॉ. नामवर सिंह ने इस विडंबना को पहचानते हुए आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियों में स्पष्ट किया है, "आज के दौर में बड़ी-बड़ी घोषणाओं के बजाय छोटी- छोटी अर्थपूर्ण सच्चाइयाँ अधिक प्रासंगिक है। आधुनिकता का अर्थ केवल तकनीक नहीं बल्कि उस तकनीक के बीच मनुष्य का बचा रहना है।"4

शिव नारायण सिंह की कथाएँ वे छोटी-छोटी सच्चाइयाँ ही हैं जो स्वप्न और यर्थाथ के बीच के पाखण्ड को उद्घाटित करती हैं। वे कोई बड़ा राजनीतिक घोषणा पत्र नहीं जारी करतीं, बल्कि विद्यार्थियों के हृदय में 'विवेक' का एक लघु दीप प्रज्ज्वलित करती हैं। यह 'विवेक' ही वह शक्ति है जो उसे बाजारवाद के चकाचौंध में भी अपनी अस्मिता बनाए रखने में मदद करती हैं। डॉ. नगेंद्र, विचारव्यक्त करते हैं – "बोध कथाओं का सौंदर्य उनके उपदेश में नहीं बल्कि उस कौतूहल और सत्य के उद्घाटन में है जो श्रोता एवं पाठक को चमत्कृत कर दे।"5

सामाजिक सम्बन्धों के विघटन– आजकल संयुक्त परिवारों का विखण्डन जिस तेजी के साथ हो रहा है, उसने एकल परिवार के वृद्धि से प्रवाह को तीव्र कर दिया है। आज के इस एकल परिवार के दौर में नगरों, महानगरों में 'दादा-दादी, नाना-नानी' इत्यादि अनुभवी अभिभावकों से दूरियाँ बढ़ती जा रही हैं। संयुक्त परिवार में दादा-दादी, नाना-नानी आदि के गोद में संस्कारयुक्त कथाएँ सुनते हुए बच्चे बड़े होते थे, उन्हें सामूहिकता का महत्त्व पता चलता था। बच्चों को बचपन से ही जिस ठोस संस्कार की सीख दी जाती थी वह उनके जीवन की अमूल्य निधि होती थी। पारम्परिक पारिवारिक संरचनाओं के टूटने और एकल जीवन शैली के बढ़ने से व्यक्ति अधिक स्वतंत्र तो हुआ है, किन्तु वह अकेलेपन और मानसिक तनाव का शिकार भी बन गया है। सम्बन्धों में आत्मीयता के स्थान पर औपचारिकता और स्वार्थ ने स्थान ले लिया है। ऐसे परिवेश में शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ चरित्र निर्माण और आदर्श की निर्मिति में अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध होती हैं।

अपनी बोधकथाओं के माध्यम से वे प्राचीन गुरुकुल की परम्परा को साकार करते हुए छात्रों को आदर्श जीवन-पद्धति और उन्हें संस्कारवान बनाने की दिशा में जो श्लाघनीय प्रयास कर रहे हैं वह युगांतकारी

है। इस सम्बन्ध में डॉ. ब्रजेन्द्र त्रिपाठी लिखते हैं, "बच्चे ही हमारे भावी नागरिक हैं, और हमारा भावी समाज कैसा होगा इन्हीं पर निर्भर है। वर्तमान समय में जिस तरह से जीवन मूल्य क्षरित हो रहे हैं, जिस तरह हमारे संयुक्त परिवार टूट रहे हैं, जिस तरह से उपभोक्तावाद और बाजारवाद के कुचक्र में हम फँसते जा रहे हैं, उसकी काट यही है कि बचपन से ही छात्रों में नैतिकता के संस्कार डाले जाएँ, उन्हें एक सार्थक जीवन-दृष्टि दी जाए, उन्हें संस्कारवान और एक संवेदनशील मनुष्य बनाया जाए, उनके सहज विवेक को जागृत किया जाए, और यह कार्य शिव नारायण सिंह बड़ी सफलता और ईमानदारी से अपनी कथाओं के माध्यम से कर रहे हैं। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार पंडित विष्णु शर्मा ने 'पंचतंत्र' की कथाओं के माध्यम से किया था। यह शिक्षा के क्षेत्र में एक अभिनव प्रयोग है। बच्चों को नित्य एक नयी कथा सुनाकर उन्हें भावी जीवन के लिए तैयार करने का काम बहुत ही महत्त्वपूर्ण कार्य है।"6

तकनीकी विकास ने जहाँ संचार को सरल और त्वरित बनाया है वहीं इसने मानवीय सम्बन्धों को सतही भी बना दिया है। आभासी जुड़ाव ने वास्तविक सम्बन्धों को कमजोर किया है, जिससे व्यक्ति सामाजिक रूप से अलग-थलग पड़ता जा रहा है। यह स्थिति ' निकटता में दूरी' की परिचायक है। शिव नारायण सिंह देश- देशान्तर के महापुरुषों से जीवन, धर्म, दर्शन और समाज आदि के दृष्टान्त के माध्यम से अपनी लघु कथाओं को गढ़ते हैं और अपने विद्यार्थियों को जीवन दर्शन के उन्हीं मूल्यों तक पहुँचाने का सत्प्रयास करते दिखाई देते हैं।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में सम्बन्ध में 'मूल्यों के निर्माण कलश' में अष्टभुजा शुक्ल, अपना मत व्यक्त करते हैं कि– "विद्यार्थियों से...' ग्रंथ श्रृंखला के संकलन प्रायः प्रतिदिन निकलने वाले ऐसे नियमित और मिशनरी (उद्देश्यपरक) विचारों के प्रतिफलन हैं, जिनमें न उपदेशों की कोरी वाग्मिता है, न ज्ञान की गरिष्ठ पेचीदगियाँ, न कक्षाओं के बोझिल पाठ्यक्रम, न सीख देने का अत्यधिक दबाव। इन सबसे अलग इनमें कक्षा में प्रविष्ट होने के पूर्व छात्रों का अत्यन्त सहज और सुबोध ढंग से किया गया मानसिक उपचार है। कर्त्तव्य का नैतिक बोध है और नए खून की नई मेधा के साथ विकसित करने की वैचारिक- प्रक्रिया। यह सबकुछ इतना अनायास, स्पष्ट और गतिमान है, जो युवा पीढ़ी के जीवन की आगामी दिशा को सर्वतोभद्र बनानेवाली है। इसकी प्रेरणाओं के मूल्यों से निकली हुई इस शाला की पीढ़ी के लिए भविष्य में विचलन के खतरे न के बराबर होंगे। ऐसी आशा करना बहुत स्वाभाविक है।"7

राजनीतिक और सांस्कृतिक विरोधाभास– समकालीन समाज में राजनीतिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी विरोधाभास मौजूद हैं। आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में वैश्वीकरण और सांस्कृतिक आदान-प्रदान के इस युग में जहाँ एक ओर स्वतंत्रता, समानता और बहुलता के आदर्श स्थापित किए जाते हैं, वहीं दूसरी ओर व्यवहार में इन आदर्शों का क्षरण भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है सबसे प्रमुख राजनीतिक विरोधाभास सत्ता के केन्द्रीकरण और जनसत्ता सिद्धान्त के बीच दिखाई देता है। लोकतंत्र में सत्ता जनता होनी चाहिए किन्तु वास्तविकता यह है कि सत्ता कुछ विशेष वर्गों, राजनीतिक दलों या प्रभावशाली व्यक्तियों तक सीमित है। राजनीति को आज सेवा के बजाय स्वार्थ और सत्ता प्राप्ति का साधन बना लिया गया है। सरकारों द्वारा विकास के किए गए बड़े-बड़े दावे आम जनता की आवश्यकताओं और हितों के अनुरूप नहीं होता है।

समकालीन समाज में सांस्कृतिक स्तर पर भी अनेक विरोधाभास देखने को मिलते हैं। परम्परा समाज की सांस्कृतिक पहचान मूल्यों और विश्वासों का आधार होती है, जबकि आधुनिकता परिवर्तन का, मानव आचार और स्वतंत्रता का प्रतिनिधित्व करती है। समकालीन समाज इन दोनों के मध्य सन्तुलन स्थापित करने का प्रयास करता है, किन्तु यह सन्तुलन प्रायः ही अस्थिर रहता है। एक तरफ तो लोग आधुनिक जीवन शैली को अपनाना चाहते हैं, वहीं दूसरी ओर अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़े रहने की इच्छा भी रखते हैं। इस द्वंद्व के कारण सांस्कृतिक अस्मिता का संकट उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त सांस्कृतिक उपभोग और सांस्कृतिक संवेदनशीलता के बीच भी विरोधाभास है। आधुनिक समाज में संस्कृति को एक वस्तु के रूप में उपभोग किया जाने लगा है, जैसे मनोरंजन, फैशन और मीडिया के माध्यम से। इससे संस्कृति की गहराई और उसके मूल मूल्य कमजोर होते जा रहे हैं।

यद्यपि समकालीन समाज में इन विरोधाभासों

को पूरी तरह समाप्त करना सम्भव नहीं है, क्योंकि ये समाज के विकास और परिवर्तन की स्वाभाविक प्रक्रिया का हिस्सा हैं, परन्तु इन्हें सन्तुलित और नियंत्रित किया जा सकता है। शिव नारायण सिंह अपनी बोधकथाओं के माध्यम से यही करने का प्रयास कर रहे हैं। उनकी कथाएँ इन विरोधाभासों को सीधे-सीधे नहीं बल्कि प्रतीकात्मक और व्यंग्यात्मक रूप में उजागर करती हैं। उनकी कथाओं में 'राजा', 'मंत्री', 'दरबार', 'व्यवस्था' जैसे प्रतीक केवल परम्परागत सत्ता संरचनाओं का प्रतिनिधित्व नहीं करते, अपितु आधुनिक राजनीतिक तंत्र की विसंगतियों को भी सामने लाते हैं। उनकी कथाओं की विशेषता है कि वे श्रोता या श्रोता एवं पाठक को किसी विचारधारा विशेष की ओर निर्देशित करने के बजाय उसे सोचने के लिए प्रेरित करती हैं। उनकी कथाएँ न तो अन्धपरम्परावाद का समर्थन करती हैं और न ही अन्धाधुन्ध आधुनिकता को स्वीकार करती हैं, बल्कि दोनों के मध्य सन्तुलन स्थापित करने की आवश्यकता को रेखांकित करती हैं।

बोधकथा परम्परा का स्वरूप और विकास – ऐसा माना जाता है कि कथा कहने की कला और परम्परा दुनिया को भारत से प्राप्त हुई है। भारत में कथा की परम्परा गुणाढ्य की रचना 'बृहत्कथा' से आरम्भ होकर 'कथासरित्सागर' से होते हुए 'पंचतंत्र', 'हितोपदेश' और जातक कथाओं के रूप में विकसित हुई है। संस्कृत साहित्य में और बाद में लोकभाषाओं में रचित कथाएँ बोधकथाएँ ही हैं। प्राचीन बोधकथा परम्परा का सर्वाधिक लोकप्रिय और व्यापक रूप 'पंचतंत्र' में देखने को मिलता है। विष्णु शर्मा द्वारा रचित 'पंचतंत्र' में राजा अमरशक्ति के मूर्ख पुत्रों को राजनीति और व्यावहारिक ज्ञान सिखाने का वृत्तांत है। यह पाँच तंत्रों में विभक्त है– मित्रभेद, मित्रसंप्राप्ति, काकोलूकीयम्, लब्धप्रणाश और अपरीक्षितकारक। इसमें पशु-पक्षियों के माध्यम से कूटनीति, अर्थशास्त्र और जीवन-दर्शन की जटिलताओं को सुलझाया गया है। शिव नारायण सिंह की कथाओं में भी पशु-पक्षियों का प्रयोग इसी परम्परा का आधुनिक विस्तार है।

नारायण पंडित द्वारा रचित 'हितोपदेश' काफी हद तक 'पंचतंत्र' पर ही आधारित है, किन्तु इसमें कुछ नई कहानियाँ और सुभाषित नैतिक सूक्तियाँ जोड़ी गई हैं। इसमें चार खंड हैं– मित्रलाभ, सुहृद्भेद, विग्रह और सन्धि। इसकी भाषा सरल है और यह विद्यार्थियों के लिए विशेष रूप से लाभप्रद है। शिव नारायण सिंह की 'विद्यार्थियों से...' की जड़ें कहीं-न-कहीं 'हितोपदेश' की सरल शिक्षण-पद्धति में देखी जा सकती हैं।

जातक कथाएँ बुद्ध के पूर्व जन्मों की कथाएँ हैं। इनका मूलाधार पूर्वजन्म और बौद्ध सत्य का त्याग है। ये कथाएँ सिखाती हैं कि एक व्यक्ति कैसे धीरे-धीरे नैतिक श्रेष्ठता को प्राप्त करता है। जातक कथाओं में समाज के निचले तबके, किसान और व्यापारियों का यथार्थ चित्रण मिलता है। इन कथाओं के पशु भी नैतिक निर्णय लेते हैं और मानवीय गुणों का प्रतिनिधित्व करते हैं। जातक कथाओं में करुणा और दया को सर्वोपरि रखा गया है। 'जातक' में उल्लेख आता है कि "करुणा वह धर्म है जो मनुष्य को मनुष्य बनाता है। बिना करुणा के नीति निरर्थक है।"9

यह उद्धरण जातक कथाओं की करुणामूलक चेतना को रेखांकित करता है, जो शिव नारायण सिंह की कथाओं में मानवीय संवेदना के रूप में पुनः प्रकट होती है। उनकी कथाओं में भी आम आदमी और उसकी विडंबनाएँ जातक कथाओं की तरह ही जीवन्त हैं।

'कथासरित्सागर' संस्कृत साहित्य का विशाल कथा-कोष है, जिसकी रचना काव्यात्मक शैली में की गई है और जिसमें तिलिस्म, रोमांच और बोध का अद्भुत मिश्रण है। इसकी प्रमुख विशेषता इसका नीतिपरक स्वरूप है। इसकी अधिकांश कथाएँ किसी न किसी नैतिक शिक्षा या जीवन-संदेश के साथ समाप्त होती हैं। इन कथाओं के माध्यम से सत्य, ईमानदारी, धैर्य, परोपकार, मित्रता, कर्त्तव्यपालन जैसे मूल्यों का महत्त्व बताया गया है। यहाँ पर वर्णित है कि- "जीवन की कथा सरल नहीं है, वह अनुभवों की जटिल शृंखला है।"10

आधुनिक समाज में जहाँ लोकतंत्र, समानता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता जैसे मूल्य प्रमुख हैं, वहाँ इन कथाओं का सीधा अनुकरण सम्भव नहीं है और यहीं से पुनर्व्याख्या की आवश्यकता जन्म लेती है। प्राचीन बोधकथाओं के मूल मूल्यों को यथावत रखते हुए उन्हें नए सन्दर्भों में ढालना समकालीन रचनाकारों के लिए एक चुनौतीपूर्ण कार्य है, जिसे शिव नारायण सिंह ने स्वीकार किया और निरंतर उद्यमरत हैं।

तुलनात्मक विवेचन– तुलनात्मक दृष्टि से विश्लेषण

करने पर स्पष्ट होता है कि प्राचीन परम्परा में जहाँ राजा और प्रजा को नीति सिखाने के लिए कथाएँ लिखी गईं, वहीं शिव नारायण सिंह ने आज के लोकतांत्रिक समाज और भ्रमित विद्यार्थियों को अपनी मानवीय सत्ता की पहचान कराने के लिए बोधकथाओं का सहारा लिया है।

प्राचीन बोधकथा परम्परा बनाम शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ : तुलनात्मक विवरण –

- आधार– प्राचीन परम्परा(पंचतंत्र, जातक आदि) / शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ
- मुख्य उद्देश्य– राजपुत्रों को नीति कूटनीति और व्यवहार सिखाना / आमजनमानस और विशेषकर विद्यार्थियों में 'मानवीय विवेक' जाग्रत करना
- पात्र संचय– पशु, पक्षी, राजा, व्यापारी और दैवीय शक्तियाँ / पशु- पक्षी, विद्यार्थी, मध्यमवर्गीय और आधुनिक जीवन की विसंगतियाँ
- निष्कर्ष शैली– अंत में स्पष्ट नैतिक शिक्षा प्रदान करना / निष्कर्ष श्रोता और पाठक के विवेक पर छोड़ दिया जाना
- संकट का स्वरूप– बाह्य संकट (युद्ध, शत्रु, अकाल, व्यापारादि) / आंतरिक और मनोवैज्ञानिक संकट (अवसाद, तकनीक का मोह, पहचान का संकट)
- भाषा-शैली– संस्कृत/पाली की सुभाषित युक्त अलंकृत शैली / समकालीन मुहावरेदार, सरल हिन्दी और व्यंग्यात्मक, पुष्ट एवं पुनर्व्याख्यात्मक विश्लेषण

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं का आलोचनात्मक विवेचन –

वैचारिक धरातल : परम्परा और आधुनिकता का संश्लेषण– आलोचनात्मक दृष्टि से देखने पर स्पष्ट होता है कि शिव नारायण सिंह की कथाएँ 'पंचतंत्र' और जातक की करुणा का आधुनिक संस्करण हैं। जहाँ प्राचीन कथाओं में नैतिकता अक्सर पारलौकिक या राजाओं के अनुशासन से जुड़ी होती थी, वहीं शिव नारायण सिंह की कथाओं में नैतिकता लोकतांत्रिक नागरिक के विवेक से जुड़ी है। उनका वैचारिक धरातल गाँधीवादी नैतिकता और आधुनिक समाजशास्त्रीय यथार्थ का मिश्रण है। वे समाज को उपदेश नहीं देते, अपितु श्रोता या श्रोता एवं पाठक के भीतर सोए हुए उस मनुष्य को झकझोरते हैं जो बाजारवाद की चकाचौंध में अन्धा हो गया है।

समकालीन विडंबनाओं की पहचान – शिव नारायण सिंह की कथाओं का सबसे प्रबल पक्ष समकालीन विडंबनाओं की पहचान है। आलोचनात्मक दृष्टि से उनकी कथाएँ तीन प्रमुख विडंबनाओं पर सीधा आघात करती हैं।

बाजारवादी वस्तुकरण – उनकी कथाओं में स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित होता है कि आज इंसान किस तरह एक 'इकाई' या 'उत्पाद' के रूप में परिवर्तित हो गया है। 'मानवीय सत्ता' जैसी कथाएँ इस बात की प्रमाण हैं कि जब तकनीक और बाजार का वर्चस्व बढ़ता है तो सबसे पहले संवेदनाएँ मरती हैं। श्री सिंह की यह कथा रेखांकित करती है कि विद्यार्थी केवल सूचनाओं का संग्रहकर्ता न बने, बल्कि अपनी मानवीय सत्ता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकारों को पहचाने। वह जड़ पदार्थ की भाँति परिस्थितियों के वशीभूत न होकर अपनी आंतरिक शक्तियों को जागृत करें।

'विद्यार्थियों से' खंड-चार की 'दुर्गुणी पौधा' बोधकथा के अंतर्गत सुगंधित फूलों के पौधों के बीच एक पौधा ऐसा उग आता है, जिसमें फूल के आते ही बगीचे में चारों तरफ दुर्गंध फैल जाती है। यहाँ पर बोधकथा आज के हिंसात्मक परिवेश को दर्शाती है। ''बगीचा शरीर है, माली जान है, सुगंध और दुर्गंध विचार हैं। मानव परिस्थितियों का दास होता है। परिस्थितिवश उसके मन में अच्छे-बुरे दोनों विचार उठते हैं। अच्छे विचार आते हैं तो उसका परिणाम सकारात्मक निकलेगा। बुरे विचार, जैसे हिंसा, भ्रष्टाचार, आतंक, लोभ, जिससे पूरा विश्व त्रस्त है। इसलिए गंदे विचार मन में आते ही उसे उखाड़ फेंकिए।"11

पाखण्ड का उद्घाटन– समकालीन समाज की यह बड़ी विडंबना है– दोहरा चरित्र। शिव नारायण सिंह की कथाएँ 'कथनी' और 'करनी' में पाखंड करने वालों के चरित्र को बड़ी सूक्ष्मता से बेनकाब करती हैं। उनका मानना है कि व्यवहार और कार्य-व्यापार में एकरूपता अत्यन्त आवश्यक है। यदि आप आदर्शों की बात करते हैं, परिश्रम की बात करते हैं, लेकिन उसे आचरण में नहीं लाते हैं तो जीवन को कष्टमय होने

से रोक नहीं सकते। 'विद्यार्थियों से...' खण्ड-दो में 'श्रमशील' शीर्षक कथा में तितली और मधुमक्खी की कथा के माध्यम से वे कहते हैं कि- ''जो मधुमक्खी की तरह श्रमशील हैं, जिन्हें अपने भविष्य की चिन्ता है, या यूँ कहिए जो कुछ कर गुजरना चाहते हैं, उनका परिणाम बेहतर होता है। और जो तितली-सा जीवन यापन करते हैं, उन्हें बस उसी क्षण की चिन्ता है, या यूँ कहिए कि बिना कुछ किए ही 'मधु का तालाब' पाना चाहते हैं, तो उन्हें मधु का तालाब कहाँ मिलेगा?"12

शार्टकट संस्कृति और तात्कालिकता का संकट– आज का समाज तत्क्षणता के युग में जी रहा है। विद्यार्थियों के भीतर यह विडंबना घर कर गई है कि सफलता एक 'उत्पाद' है जिसे बाजार से खरीदा जा सकता है। शिव नारायण सिंह 'काँटे और फूल' के माध्यम से यह स्थापना देते हैं कि फूल — सफलता की सत्ता – काँटों अर्थात् संघर्ष की उपस्थिति के बिना अर्थहीन है। जिस प्रकार काँटे फूल की सुरक्षा करते हैं, उसी प्रकार जीवन की कठिनाइयाँ मनुष्य के चरित्र को गढ़ती हैं। इस कथा का द्वंद्वात्मक यथार्थ यह है कि हम काँटों से बचना चाहते हैं, पर गुलाब की खुशबू का आनन्द लेना चाहते हैं।

इसी प्रकार 'सुख की अनुभूति' कहानी का विश्लेषण करते समय रामनरेश कुशवाहा लिखते हैं — "'सुख की अनुभूति' कहानी सीधे तौर पर स्पष्ट करती है कि बिना दुख की अनुभूति के सुख की अनुभूति नहीं होती। बिना खोए, पाने का आनन्द नहीं मिलता। यह कथा इस सिद्धान्त पर आधारित है कि बिना विरोधी के अस्तित्व के, किसी का कोई महत्त्व नहीं है। अंधेरा न हो तो प्रकाश का महत्त्व नहीं है, और मूर्ख न हों तो विद्वान का अस्तित्व नहीं है। उसी तरह दुख नहीं तो सुख का कोई अस्तित्व नहीं है।"13

इसी प्रकार 'स्वप्न और यथार्थ' बोधकथा विद्यार्थियों को यह बोध कराती है कि स्वप्न लक्ष्य की प्रेरणा हो सकते हैं, लेकिन जीवन तो यथार्थ के धरातल पर ही जिया जाता है। यह कथा बाजारवाद के इस दोहरेपन पर चोट करती है जहाँ व्यवस्था विद्यार्थियों को केवल एक 'उपभोक्ता' बनाकर रखना चाहती है।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं का शिल्प और भाषाई वैशिष्ट्य– शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ 'गागर में सागर' भरने की कला का जीवन्त उदाहरण हैं। जहाँ समकालीन साहित्य अक्सर जटिल शिल्प के जाल में फँसकर अपनी संप्रेषणीयता कुछ हद तक खो देता है, वहीं शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ अपनी सरलता से सीधे हृदय को स्पर्श करती हैं। इन बोधकथाओं का सबसे बड़ा शिल्प उनकी लघुता है। शिव नारायण सिंह इस तथ्य से भलीभाँति परिचित हैं कि इस भागमभाग के युग में श्रोता एवं पाठक के पास लंबे दर्शन सुनने या पढ़ने का धैर्य नहीं है। उनकी कथाओं का शिल्प सूत्र-शैली पर आधारित है। वे कथा का आरंभ सीधे समस्या से करते हैं और अंत एक ऐसे बोध पर होता है, जो श्रोता या श्रोता एवं पाठक को देर तक सोचने पर विवश कर देता है।

शिल्प के स्तर पर उन्होंने व्यंग्य को एक औजार के रूप में इस्तेमाल किया है। जब वे 'स्वप्न और यथार्थ' की बात करते हैं तो उनकी भाषा थोड़ी तीक्ष्ण हो जाती है, जो आधुनिक समाज के दिखावे और पाखंड की परतों को बड़ी बेरहमी से उखाड़ती है। उनके व्यंग्य में कटुता नहीं, बल्कि एक प्रकार की करुणापूर्ण चेतावनी होती है। वे अपनी कथाओं में साधारण वस्तुओं या स्थितियों को गहरे प्रतीकों में बदलने की क्षमता रखते हैं।

सामाजिक और नैतिक दृष्टि से शिव नारायण सिंह का योगदान – शिव नारायण सिंह का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान पारम्परिक बोधकथा विधा को नैतिक उपदेश के साथ-साथ उसे सामाजिक यथार्थ, आलोचना और चेतना के स्तर पर पुनर्व्याख्यायित करना है। उन्होंने यह स्थापित किया है कि नैतिकता किसी गुफा या मंदिर का विषय नहीं, बल्कि विद्यार्थी के बस्ते, बाजार के व्यवहार और मानवीय सम्बन्धों की पवित्रता में निहित है। उनकी कथाएँ नैतिकता के लोकतंत्रीकरण का कार्य करती हैं, जहाँ हर साधारण इंसान भी अपने भीतर के सत्य को पहचानने की शक्ति और सामर्थ्य पाता है।

आज का समाज घोर व्यक्तिवाद से ग्रस्त है। 'मैं' और 'मेरा' के घनचक्कर में उलझकर वह अपना अस्तित्व खोता जा रहा है। शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ व्यक्ति को उसके अहंकार के सीमित दायरे से निकालकर सामाजिक उत्तरदायित्व की ओर उन्मुख करती हैं। व्यंग्य के माध्यम से वे समाज के पाखण्ड, दिखावे और द्वंद्व को उजागर करते हैं, जिससे श्रोता-पाठक को अपनी सोच और व्यवहार पर

पुनर्विचार करने की प्रेरणा मिलती है। 'विद्यार्थियों से...' की कथाएँ इस बात का प्रमाण हैं कि वे युवाओं को केवल करियर के लिए नहीं, बल्कि जीवन के लिए तैयार करते हैं। उन्होंने अपने विद्यार्थियों को सिखाया कि सार्थक सफलता व्यक्ति को ऊपर उठा सकती है, लेकिन चरित्र ही उसे टिकने की शक्ति देता है।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विवेचन के परिप्रेक्ष्य में कहा जा सकता है कि समकालीन साहित्य में शिव नारायण सिंह का योगदान उनकी बोधकथाओं के माध्यम से महत्त्वपूर्ण रूप से स्थापित होता है। उन्होंने इस परम्परागत विधा को आधुनिक संदर्भों से जोड़कर उसे एक नई वैचारिक ऊँचाई प्रदान की है। उनकी रचनाओं की प्रमुख विशेषता उनकी प्रतीकात्मकता, व्यंग्यात्मकता और बहुस्तरीय अर्थसंरचना है। वे सरल कथानकों के माध्यम से जटिल सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रश्नों को सामने लाते हैं। उनके द्वारा प्रयुक्त प्रतीक और रूपक आधुनिक समाज की वास्तविकताओं को उजागर करते हैं, जिससे श्रोता एवं पाठक को गहन चिंतन के लिए प्रेरणा मिलती है।

इसके अतिरिक्त, उनकी बोधकथाएँ पुनर्व्याख्या की व्यापक सम्भावनाएँ प्रस्तुत करती हैं। वे समाज में व्याप्त विसंगतियों को उजागर करने के साथ-साथ नैतिक चेतना और आत्मविश्लेषण की भावना को प्रोत्साहित करती हैं। उनकी कथाएँ यह स्पष्ट संकेत देती हैं कि वास्तविक विकास केवल भौतिक नहीं, बल्कि मानवीय और नैतिक मूल्यों पर आधारित होना चाहिए। अंततः, समकालीन समाज की जटिलताओं और विडंबनाओं को समझने के लिए शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ एक सशक्त और प्रभावी माध्यम हैं।

सन्दर्भ सूची –

1. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 232
2. हिन्दी साहित्य की भूमिका, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या –17 – 18
3. 'मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 42 – 45
4. आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, डॉ. नामवर सिंह, लोक भारती प्रकाशन, प्रयागराज, पृष्ठ संख्या – 85,
5. भारतीय काव्य शास्त्र की भूमिका, डॉ. नगेंद्र, ओरियंटल बुक डिपो दिल्ली, संस्करण 1995, पृष्ठ संख्या – 56
6. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 59
7. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 68
8. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 16
9. जातक कथा, मंगलानंद, अनु. राहुल सांकृत्यायन, मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या –87
10. कथा सरित्सागर, तरंग-5, पं. दुर्गाप्रसाद द्विवेदी, गीताप्रेस गोरखपुर, पृष्ठ संख्या – 211
11. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 55
12. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 04
13. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 24 – 25

9454806323
Shivshivoaham@jagoshiv.in
Shivshivoaham@gmail.com

स्वामित्व- शिव नारायण सिंह, अध्यक्ष, जागो शिव न्यास, शिवलोक, गोरखपुर उ. प्र.
के उपक्रम बोधकथा शोध संस्थान की मासिक ई पत्रिका 'शोध बोध' में छपे शोध आलेख
की सम्पूर्ण ज़िम्मेदारी शोधार्थी की होगी, किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र गोरखपुर होगा।